भारत सरकार द्वारा विज्ञापनों के लिए मान्यता प्राप्त

आरएनआई पंजीयन RAJHIN/2016/72902

डाक पंजीयन RJ/ UD/ 29-150/ 2020-2022



# शब्द रंजन

संस्थापक एवं संरक्षक डॉ. महेन्द्र भानावत

विचार एवं जनसंवाद का पाक्षिक

वर्ष 6 | अंक 22 | उदयपुर बुधवार 01 दिसंबर 2021 | पेज 8 | मूल्य 5 रू.

## कभी उदयपुर राजदरबार में 99 हाथी पलते थे

*उदयपुर के राजमहलों में किसी समय हाथियों की संख्या 99 थी। यह संख्या कभी कम नहीं हुई। कई बार इसे बढ़ाने का प्रयत्न किया गया पर ज्यों ही एक नया हाथी खरीदा जाता, पहले वाले हाथियों में से कोई एक मृत्यु को प्राप्त होता। यह संख्या 99 की 99 ही रही। चित्तौड़ में महाराणा सांगा के समय 99 हाथी प्रात:काल उन्हें सलाम करते थे। हाथी का मद उसकी कनपटी के पास एक सुराख से बहता है। अच्छा हाथी चार-चार माह और आठ-आठ माह तक मद देता है। बहुत कठिनाइयों से ही मनुष्य उसे प्राप्त कर सकता है। मद से कस्तूरी जैसी खुशबू आती है। मद कई रंग वाला होता है। सफेद भी, हरा भी, गुलाबी और लाल रंग का भी। काले रंग का तो होता ही है। यह मद बड़ा ताकतवर होता है।*

***उदयपुर में पीपलिया, कोड़यात, केली, आड़, कालीवास, ऊंदरी, पोपलटी, बागदड़ा, मदारिया, धोर्‌या, भीलवाड़ा, बडूंदिया, पाट्यां, मजावत, मोटागांव, दादया, खांखरी, गटामाता, उनावली, झाड़ोल, तिरपाल, ढोल, कट्यांवाड़, झींडोली, सेलुकाबाग आदि स्थानों पर हाथी बन्धते थे। हमने इनमें से कोड़यात तथा ऊंदरी स्थान भी देखे। पटना के छतर के मेले से कभी दो हाथी, कभी तीन हाथी, कभी चार हाथी तो कभी तीन हथिनियां खरीद कर लाए। हथिनी अठारह महीने गर्भ धारण करती है। हाथी का बच्चा या 'मखना हाथी' जिसके दांत नहीं निकलते, चार वर्ष तक दूध पीता है और अधिक ताकतवर होता है।***

हाथियों के बारे में आम लोगों ने बहुत सारी बातें सुन रखी होंगी पर हाथियों के मद के बारे में लोगों को अधिक मालूम नहीं है। उदयपुर के राजमहलों में किसी समय हाथियों की संख्या 99 थी। यह संख्या कभी कम नहीं हुई। कई बार इसे बढ़ाने का प्रयत्न किया गया पर ज्यों ही एक नया हाथी खरीदा जाता, पहले वाले हाथियों में से कोई एक मृत्यु को प्राप्त होता। यह संख्या 99 की 99 ही रही। चित्तौड़ में महाराणा सांगा के समय 99 हाथी प्रात:काल उन्हें सलाम करते थे।

इतने हाथियों की देखभाल के लिए खास इन्तजाम भी रहता। कई महावत होते जो हाथियों की देखभाल करते। उदयपुर में आज भी एक पूरी बस्ती का नाम महावतवाड़ी है जिसमें कभी महावत ही रहते थे। एक दिन मुझे शायर इकबाल सागर ने उनके पास रह रहे इसी महावतवाड़ी में सर्वाधिक वयोवृद्ध हाथीपालक उलफत अली (90)से भेंट कराई। वह दिन 06 जुलाई 1984 का था।

मैंने उलफत अली से मुख्यत: हाथी के मद और उसके सम्बन्ध में प्रचलित धारणाओं के बारे में पूछा। उन्होंने बताया कि हाथी का मद उसकी कनपटी के पास एक सुराख से बहता है। वह पानी की तरह पतला होता है। चौमासे में हाथी अधिक मद करता है। अमूमन माह-दो-माह तक उसका मद झरता रहता है। अच्छा हाथी चार-चार माह और आठ-आठ माह तक मद देता है। औरतों के लिए जैसे रजस्वला होना आवश्यक है, उसी प्रकार हाथी के लिए मद होना जरूरी है नहीं तो वह बीमार पड़ जाएगा। मद के दिनों में हाथी को कड़ाई से बांध दिया जाता है और उससे कोई काम नहीं लिया जाता है।

यह मद हाथी स्वयं ही सूण्ड से चाट जाता है। बहुत कठिनाइयों से ही मनुष्य उसे प्राप्त कर सकता है और वह भी महावत ही। इस मद से कस्तूरी जैसी खुशबू आती है। यह मद कई रंग वाला होता है। सफेद भी, हरा भी, गुलाबी और लाल रंग का भी। काले रंग का तो होता ही है। यह मद बड़ा ताकतवर होता है। यदि आदमी उसका प्रयोग कर ले तो उसकी ताकत में वृद्धि होती है।

उलफत अली ने बताया कि 'सिंदल' नामक एक हाथी दरबार की सवारी का हाथी था। उसने छह माह तक मद दिया। यह मद काला था पर उसने किसी को नहीं लेने दिया। एक 'रामप्रसाद' नाम का हाथी था। वह बेचारा बड़ा सीधा था। उसने मद लेने दिया। एक और 'बादल सरकार' हाथी था। उसने भी मद लेने दिया। ताबीज व धूनी में भी मद बड़ा काम आता है।

उलफत अली के पास तीन-तीन हाथी थे जिनकी वे देखभाल करते थे। जहां इनका काम उन्हें खिलाने-पिलाने तथा ठीक ढंग से देखभाल करने का था वहां वे उन्हें सलाम करना, पिछले पांवों पर बैठना, नाचना सिखाते थे। उन्हें फेरते-टहलाते, जिमाते और उनकी चमक निकालते। आसोजी चेती दसरावे पर दरबार उनकी पूजा करते तब पांच हाथियों को सोने के जेवरों से खूब सजाया जाता।

इतने हाथियों के बान्धने के भी विशिष्ट स्थान होते। उलफत अली ने बताया कि उदयपुर में पीपलिया, कोड़यात, केली, आड़, कालीवास, ऊंदरी, पोपलटी, बागदड़ा, मदारिया, धोर्‌या, भीलवाड़ा, बडूंदिया, पाट्यां, मजावत, मोटागांव, दादया, खांखरी, गटामाता, उनावली, झाड़ोल, तिरपाल, ढोल, कट्यांवाड़, झींडोली, सेलुकाबाग आदि स्थानों पर हाथी बन्धते थे। हमने इनमें से कोड़यात तथा ऊंदरी स्थान भी देखे। पटना के छतर के मेले से हाथी खरीद कर लाये जाते थे। उलफत अली इस मेले में दस-बारह बार गये। कभी दो हाथी, कभी तीन हाथी, कभी चार हाथी तो कभी तीन हथिनियां खरीद कर लाए। एक हाथी की कीमत पांच हजार की कूंती जाती।

मैंने उलफत अली से पूछा कि हाथी बदला लेने वाला जानवर कहा जाता है और बाजवक्त अपने महावत तक को नहीं छोड़ता है। मैंने यह भी सुना है कि उसके निमित्त भोजन में ये यदि कोई थोड़ा चुरा लेता हे तो उसे पता लग जाता है और ऐसी स्थिति में वह उसके प्राण तक ले लेता है। इस पर हंसते हुए उलफत अली ने कहा कि हाथी तो बड़ा बुजदिल होता है। यह बड़ा चमक वाला और भड़कीला होता है। उससे तो कुत्ते अधिक ठीक होते हैं, जो चमकते भटकते नहीं हैं। यह घास खाने वाली कोम है। अत: बदला लेने की दुष्टवृत्ति इसमें नहीं पनपती। हाथी के रोट के नाम पर मिलने वाले आटे में से हजारों मन आटा बेचा गया है। किसी हाथी ने कोई बदला नहीं लिया।

मेरे यह पूछने पर कि क्या चींटी हाथी को मार सकती है? वे बोले कि यह सुना-ही-सुना जाता है। इस बात में सार कुछ नहीं। चींटी की क्या बिसात जो हाथी के मुंह लगे। उन्होंने बताया कि हाथी के मर जाने के बाद उसके नाखून और दांत काम के होते हैं, शेष भाग नहीं। हथिनी अठारह महीने गर्भ धारण करती है। हाथी का बच्चा या 'मखना हाथी' जिसके दांत नहीं निकलते, चार वर्ष तक दूध पीता है और अधिक ताकतवर होता है। दांत वाला हाथी ढाई वर्ष तक दूध पीता है। फिर उसके दांत हथिनी को चूभने लगते हैं और वह दूध पिलाना बन्द कर देती है।

उलफत अली हाथियों की हर नब्ज पहचानते थे। उसके चाल-चलावे, प्रकृति, आदत, नाज-नखरे आदि सबके सम्बन्ध में उन्हें बहुत अच्छी जानकारी थी। हाथी को कब क्या देना चाहिये, कितना खिलाना-पिलाना चाहिए, किस मौसम में उसे किस तरह रखना चाहिए आदि के सम्बन्ध में उन्हें सारी बातें मुंह जबानी याद थीं। हर प्रकार की बीमारी का इलाज उनकी जबान पर था है।

मैं जब उनके घर से चला तो कुछ दूर तक वे मेरे साथ आये। इतने में उधर से एक हाथी गुजरा। उन्होंने उसे देखते ही कह दिया कि यह बीमार है। उसकी बीमारी का नाम भी बता दिया और इलाज भी। बोले, हाथियों में तो मैंने पूरी जिन्दगी बिताई है। मैंने ही नहीं, मेरे बाप-दादों ने भी यही काम किया है। यह भी पूरा शास्त्र है। आप कभी फुर्सत से आओ तो एक पोथी जितनी बातें बता दूं।

## जाजम राळो माणक चौक में

सामूहिक बैठक की पहचान 'जाजम' अपना अस्तित्व खो बैठी है। होने को सामूहिक भोज भी होते हैं परन्तु बैठकर भोजन करना कोई पसंद नहीं करता। सब पतलून में बिना सल डाले खड़े-खड़े ही 'निबटना' चाहते हैं। लिहाजा 'जाजम' की परम्परा ही लुप्त होती जा रही है।

अधिक समय नहीं हुआ जब मौसर से लेकर विवाह, मुण्डन, नांगल तथा अन्य खास खाने के लिए बकायदा जाजम बिछती थी। महिलाओं में जाजम के लिए खास चाहत थी। उनका जाजम पर आकर बैठना एक तरह से समारोह में शामिल होने पर 'मुहर' का काम करती थी। अब खड़े-खड़े ही चार कौर ग्रहण करो और 'लिफाफा' थमाकर लौट जाओ। बैठकर खाना परम्परा और खड़े-खड़े खाना प्रगतिशीलता की पहचान मानी जाने लगी है।

वह पीढ़ी अभी आयुष्य लिए हुए है जो सामूहिक, सामाजिक समारोह में शामिल होते समय 'जाजम' को आदर देती हुई आयोजनकर्ता से अपने बैठने के लिए 'जाजम' की ख्वाहिश करती है। जाजम न मिलने पर खड़ी रहती है। जाजम मीठी मनुहार की प्रतीक है-

*'म्हांने जाजम दो यजमान, म्हांने सतरंज दो बिछवाय।*
*म्हांकी बोत करो मनुवार के बिड़िया पान की सा..।'*

आयोजन स्थल को प्राय: 'माणक चौक' नाम से अभिहित किया जाता है। इस जाजम पर मनुष्य तो क्या सभी देवताओं की उपस्थिति का अहसास माना जाता है। कहा भी जाता है कि 'जाजम पे बैठे वो ही श्याणो।' जाजम पर बैठने वाले को पंच भी कहा जाता है- 'जाजम राळो ई माणक चौक में जिपे रमसी सगळा ही देव..।' लोकजीवन में जाजम बिछाना आयोजन प्रारम्भ होने का प्रतीक स्वीकारा जाता है और जाजम का उठना आयोजन का समापन। कभी शहर में सामूहिक और पंचायती जाजमें होती थीं। 'जीमन' के लिए पंगतदार जाजम (लम्बी) और बैठने के लिए आयाताकार अथवा वर्गाकार जाजम होती। इसकी सुरक्षा और मर्यादा का ध्यान रखा जाता।

यात्राओं पर जाते, गंगोज भरने, यात्रियों के आगमन तथा अन्यान्य सामाजिक समारोहों में भी 'जाजम' की प्रतिष्ठापूर्ण पहचान थी। किसी को 'जाजम' पर नहीं आने देना एक सजा के समान समझा जाता था। आज न जाजम है न ही जाजम के प्रति वह आदर। विवाह समारोह के बड़े खानों से भी 'जाजम' जाती रही। खड़े-खड़े खाना और चले जाना जाजम की परम्परा के प्रति अनदेखी ही है। इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि आज 'जाजम' पर जमने और जीमने जैसी फुर्सत किसी के पास नहीं। **- म. भा.**

पोथीखाना

# परम्परा का लोक : लोकसाहित्य में बिना गांठ वाला गन्ना

- बालकवि बैरागी -

**एक अत्यंत सक्रिय संस्था थी भारतीय लोककला मण्डल। इस संस्था ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भरपूर यश लूटा। इसमें अपनी आयु का सारा सोना-स्वर्ण-स्वाहा करने वाले लोकमनीषी डॉ. महेन्द्र भानावत की दूरदर्शी कसौटी-दृष्टि ने मालती शर्मा की कलम के भविष्य को पहचाना। उसे 'रंगायन' में पूरे सम्मान से छापा और देखते-देखते मथुरा-वृंदावन-गोकुल और ब्रज की एक रसवंती कलम अंतर्राष्ट्रीय क्षितिज पर प्रकट हो गई।**

**यदि आप हजार-दो हजार, पांच हजार, दस हजार और लाख पचास हजार साल पहले के भारत की लोकसंस्कृति, भारत के लोकसाहित्य, भारत की श्लील-अश्लील लोक-गालियों और लोकसाहित्य से परिचित होना चाहते हैं तो इस पुस्तक को पढ़िये। बिना गांठ के इस गन्ने को चूसिये। बिना गांठों के इस गन्ने में मिठास के साथ-साथ केसर और कस्तूरी की गंध का अहसास भी आपको होगा।**

इस पुस्तक को मैं 'हिन्दी की गन्ना खेती में एक बिना गांठ वाला गन्ना' मानता हूं। पूरी पुस्तक सरस है। कहीं नीरसता नहीं। पुस्तक की लेखिका है पुणेश्वरी डॉ. श्रीमती मालती शर्मा और सम्पादक हैं भाई डॉ. महेन्द्र भानावत।

गन्ने का रस मीठा होता है। आप यह भी जानते हैं कि शक्कर गन्ने से बनती है। यह तो आप जानते ही हैं कि गन्ना चूसा जाता है। गन्ना खाया भी जाता है और पीया भी जाता है। गन्ने की खेती से आप परिचित हैं, यह मेरा विश्वास है। कृपया कभी पूरा गन्ना हाथ में लेकर देखिये। प्रत्येक गन्ने की काया पर छोटी-बड़ी दूरी पर गांठें होती हैं। बिना गांठ वाला कोई गन्ना नहीं होता। गन्ने को सांठा भी कहते हैं। सच्चाई यह है कि गन्ने की पेरियां तो मीठी होती हैं, रसीली होती है पर उसकी गांठों में कोई मिठास नहीं होती। वे सरस और रसीली नहीं होतीं। अस्तु।

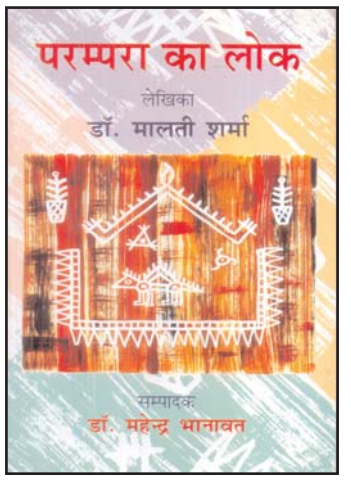


भारत के इतिहास में एक अत्यंत सक्रिय लोककला एवं लोकसाहित्य-संस्कृति-संरक्षक संस्था थी भारतीय लोककला मण्डल। इसके संस्थापक रहे स्व. श्री देवीलाल सामर। उदयपुर की इस संस्था ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भरपूर यश लूटा। इस संस्था में अपनी स्वर्णिम आयु के सुवाकाल का सारा सोना-स्वर्ण-स्वाहा करने वाले लोकमनीषी का नाम है डॉ. महेन्द्र भानावत। संस्था की एक महत्वपूर्ण पत्रिका होती थी 'रंगायन'। डॉ. भानावत इसके यशस्वी सम्पादक रहे। 'रंगायन' में एक लेखिका अनायास प्रविष्ट हुई। नाम रहा श्रीमती मालती शर्मा। डॉ. भानावत की दूरदर्शी कसौटी-दृष्टि ने मालती शर्मा की कलम के भविष्य को खूब पहचाना। भारत के लोकसाहित्य और लोकजीवन पर मालती शर्मा ने जो भी अनुपम और अनन्य तथा अद्‌भुत सरस एवं प्रामाणिक लिखा उसे डॉ. भानावत ने 'रंगायन' में पूरे सम्मान से छापा और देखते-देखते मथुरा-वृंदावन-गोकुल और ब्रज की एक रसवंती कलम अंतर्राष्ट्रीय क्षितिज पर प्रकट हो गई।

'रंगायन' में मालती के 34 लेख लोकजीवन और भारत की लोकप्रथा पर छपे। एक से एक सरस। एक से एक रसीले। एक से एक लौकिक किंतु अलौकिक। स्वयं डॉ. महेन्द्र भानावत के शब्दों में इन लेखों का विवेचन देखिये। वे लिखते हैं-

''मालतीजी द्वारा लिखित ये लेख किसी एक दिशा, एक दृष्टि, एक विषय, एक विन्यास, एक शिल्प, एक शैली, एक बोध, एक लोकाचार, एक विचार, एक मत, एक रंग, एक छवि, एक मंतव्य के सूचक नहीं हैं और न किसी एक ही लेखन-सांचे से आबद्ध हैं। सब अपने में अलग विविध हैं। अनूठे हैं। कहीं से भी अपनी यात्रा शुरू कर समाप्त कर देने वाले हैं। इन लेखों में साहित्य की सारी विधाओं का चखान मालतीजी के लेखन की एक बड़ी उपलब्धि कही जायेगी।'' (पष्ठ 9)

आज की लेखनी, सिद्ध कवयित्री और लोक-लेखिका डॉ. मालती शर्मा के लिए इससे बड़ा 'प्रमाणपत्र' कौनसा लोकदेवता देगा। पिछले 50 वर्षों का लोकसाहित्य, श्रम और अध्ययन मालतीजी के आंचल में बंधा था। महेन्द्र भाई ने उस पर केसर छिड़क दी। 'रंगायन' की फाइलों को सम्हालना अपनी लोकरस की गन्ना खेती में बिना गांव का गन्ना उगाकर सुरक्षित रख लेना एक सुसंपादक का कमाल है।

इस पुस्तक का कोई भी पृष्ठ पढ़ना शुरू कर दीजिए, आप बंधे के बंध रह जायेंगे। यदि आप हजार-दो हजार, पांच हजार, दस हजार और लाख पचास हजार साल पहले के भारत की लोकसंस्कृति, भारत के लोकसाहित्य, भारत की श्लील-अश्लील लोक-गालियों और लोकसाहित्य से परिचित होना चाहते हैं तो इस पुस्तक को पढ़िये। बिना गांठ के इस गन्ने को चूसिये। पुस्तक में कुल 44 लोक आलेख हैं जिसमें 34 तो मात्र 'रंगायन' और डॉ. महेन्द्र भानावत की कृपा से ही हमारे सामने हैं।

लेखिका ने अपने जीवन के नेपथ्य को प्रकट किया है 'घट संचित बूंदों की कहानी में'। जरूर पढ़िये। क्या-क्या नहीं हुआ है? क्या-क्या नहीं सहा है और क्या-क्या नहीं किया है? स्वयं के नेपथ्य को प्रकट करने का एक बढ़िया मंच पुस्तक के संपादक ने अपनी रसवंती लेखिका को दिया है। लेखिका और संपादक साथ-साथ हैं कि आगे-पीछे। कौन कहां आगे है और कौन कहां पीछे, यह समझना बहुत मुश्किल है। इस बिंदु पर आप पढ़ते जाइये और खुद से लड़ते जाइये। बिना गांठों के इस गन्ने में मिठास के साथ-साथ केसर और कस्तूरी की गंध का अहसास भी आपको होगा। भारत के विविध अंचलों और विविध भाषाओं का कला लोक आपके सामने प्रकट हो जायेगा। यह वो गन्ना नहीं है जो आप किसी चरखी वाले को देकर रस निकलवालें और पीने की कोशिश करें। यह तो स्वयं ही चूसने और रस लेने वाला सांठा है। सचमुच हिन्दी के इस 475 रूपया मूल्य वाले ग्रंथ पर आने वाले 500 सालों तक गर्व करें तो किसी को भी आश्चर्य नहीं होगा। पुस्तक आर्यावर्त संस्कृति संस्थान दिल्ली-110094 से प्रकाशित है।

# मुनि मनितप्रभसागर के दो कहानी संग्रह

**कहानी जिद्‌दी बच्चे को सुलाती है। चिड़चिड़े को झुलाती है। बीमार को ठीक करती है। सोते को जगाती है। भूत-प्रेत को भगाती है। अज्ञानी को ज्ञान देती है। भूले को राह लगाती है। नुगरे को सुगरा बनाती है। भ्रष्ट को नैतिक बनाती है। पापी को धर्मी बनाती है। लूटेरे को दानी और डाकू को संन्यासी बनाती है। यदि कथा-ग्रंथ नहीं होते तो साहित्यजगत की यात्रा उसी तरह दुर्गम होती जैसे तरु के अभाव में मरुधर की यात्रा होती है। नमक के बिना सब्जी और चीनी के बिना मिठाई बन सकती है पर कहानी के बिना जिन्दगी नहीं बन सकती।**

कहानी का महत्त्व जताते डॉ. महेन्द्र भानावत ने एक छोटी-सी कहानी सुनाते कहा-

'नानी कहो कहानी'
'बेटा नींद न लेना
एक था राजा
एक थी रानी
न राजा रहा न रानी
केवल रही कहानी।'

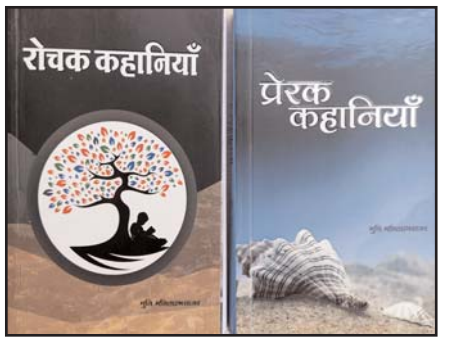


सच है, कहानी जिद्‌दी बच्चे को सुलाती है। चिड़चिड़े को झुलाती है। बीमार को ठीक करती है। सोते को जगाती है। भूत-प्रेत को भगाती है। अज्ञानी को ज्ञान देती है। भूले को राह लगाती है। नुगरे को सुगरा बनाती है। भ्रष्ट को नैतिक बनाती है। पापी को धर्मी बनाती है। लूटेरे को दानी और डाकू को संन्यासी बनाती है।

बचपन में सुनी कौए-लौमड़ी की कहानी, बैल-गीदड़ की कहानी, बन्दर-मगर की कहानी, कछुआ-खरगोश की कहानी, सोनाबाई-रूपाबाई की कहानी, तोत्ये-मोत्ये की कहानी, डाकी बन्दर की कहानी, शेर-चूहे की कहानी, डोकरी-डोकरी खाऊं की कहानी, सब जीवन जीने, जीवन बनाने, जीवन बचाने की और जीवन सार्थक बनाने की हजारों-लाखों असंख्यक कहानियां हैं। सारे ग्रंथ, शास्त्र और भण्डार कहानियों से भरे पड़े हैं। जैसा कि नाम से ही सिद्ध है प्रेरक कहानियों और रोचक कहानियों के दोनों संग्रह न केवल प्रेरक और रोचक हैं अपितु आचार्य जिनमणिप्रभसूरि के अनुसार- 'कहानी का अपना एक सन्देश होता है, अपना एक प्रवाह भी। असल में प्रवाह है तो वही कथा है। प्रवाह के अभाव में कथा अपना सौंदर्य खो बैठती है। कथावस्तु में तो प्रवाह होता ही है। प्रश्न है कि उसे व्यक्त कैसे किया जाय कि प्रवाहपूर्ण सौंदर्य प्राप्त हो। कथावस्तु के कथन या लेखन में प्रवाह को टिकाये रखना और उसे गहराई देना आसान नहीं है। ऐसे प्रवाहपूर्ण आख्यान ही व्यक्ति के मानस में सीधे उतरकर हृदय परिवर्तन की मजबूत भूमिका का निर्माण करते हैं। प्रस्तुत लेखन ऐसा ही अमृत प्रवाह से परिपूर्ण मीठा-मीठा झरना है।'

रोचक कहानियों के लिए कहा गया है, 'कथा का नाम सुनकर बूढ़े चहक उठते हैं और स्टोरी के नाम से बालक खिल उठते हैं। जिस प्रकार प्रश्नोत्तर-ग्रंथ में जिज्ञासा और समाधान के बीच व्यवधान नहीं होता वैसे ही कथा-ग्रंथ में भी वाचन और पाचन के बीच विलम्ब नहीं होता। कथाएं तुरन्त व्यथाएं धोती हैं। आंसुओं को पौंछती हैं और अपनत्व का रंग बिखेरती हैं। यदि कथा-ग्रंथ नहीं होते तो साहित्यजगत की यात्रा उसी तरह दुर्गम होती जैसे तरु के अभाव में मरुधर की यात्रा होती है। नमक के बिना सब्जी और चीनी के बिना मिठाई बन सकती है पर कहानी के बिना जिन्दगी नहीं बन सकती।'

मुनिमनितप्रभसागरजी लिखित सभी कथाएं धार्मिक हैं जो विविध ग्रंथों से लेकर लिखी गई हैं। श्री जिनकांतिसागरसूरि स्मारक ट्रस्ट, जहाजमन्दिर, मांडवला (जालोर, राजस्थान) से प्रकाशित इनका मूल्य 50-50 रूपया है। **-डॉ. कहानी भानावत**

# ग़ज़ल संग्रह- वो नदी गई कहां

दोहा और ग़ज़ल के कवि जगदीश तिवारी का नवीन संग्रह 'वो नदी गई कहां' 88 ग़ज़लें लेकर बोधि प्रकाशन, जयपुर से आया है। सभी ग़ज़लें वर्तमान के जीवन परिदृश्य को रेखांकित करने वाली हैं। दोहा तो दो पंक्ति वाला प्राचीन छन्द है सो उसकी हर पंक्ति 13-11 मात्रा लिये होती है पर ग़ज़ल का जल एक-सा नहीं होने से हर तरह से बन्धन मुक्त है। उसमें लय अवश्य है पर तुक से तुक का मिलान नहीं। मात्रा गिनने पर 13, 14, 16, 20, 21, 22, 23, 24 से लेकर हर पंक्ति 27, 28 तक जा पहुंची है। दो उदाहरण-

एक हवा का झोंका हूं
हर पल बहता रहता हूं (पृष्ठ 27)
कभी तो दौर आयेगा हंसेंगे
हम सभी खुलकर
मिटा देंगे उन्हें 'जयदीश'
जो हंसने नहीं देता।

**- काव्या**

स्मृतियों के शिखर (132) : डॉ. महेन्द्र भानावत

# सहरियों में कुल्हाड़ी जीवन-यापन का अनिवार्य औजार

राजस्थान की आदिम जातियों में सहरिया सर्वाधिक पिछड़ी, अविकसित तथा सीधीसादी, भोलीभाली है। कोटा जिले की शाहाबाद एवं किशनगंज तहसील में 127 गांव ऐसे हैं जिनमें इस जाति के लोगों की संख्या आधे से अधिक हैं। झालावाड़, उदयपुर, डूंगरपुर जिलों में भी यह जाति यत्र तत्र पाई जाती है। जयपुर, सवाई माधोपुर, भरतपुर तथा चुरू में भी इस जाति के नामलेवा लोग मिल जायेंगे परन्तु कोटा जिला ही इसका मुख्य निवास स्थान है।

हाड़ौती क्षेत्र की सर्वेक्षण यात्रा के दौरान 07 मई 1965 को शाहबाद की यात्रा कर वहां रह रहे सहरिया जनजाति के लोगों से भेंट की और उनके सामाजिक जीवन परिवेश से रू-ब-रू हुए। 09 मई को कोटा के विनोद गांव में रात्रि को घासी मीणा से पृथ्वीराज के कड़े टेप किये।

प्रारम्भ में सहरिया जंगलों में रहते थे और कन्दमूल खाकर अपना जीवन यापन करते थे। चूंकि शाहाबाद का क्षेत्र बरसों तक मुगलों के अधीन रहा अत: मुगल लोग अपनी बोलचाल तथा दैनिक व्यवहार में फारसी भाषा का प्रयोग करते थे। फारसी में जंगल को सहरा कहते हैं इसलिए जंगल में रहने वाले सहरिये कहे जाने लगे और यही नाम इनके लिए प्रयुक्त होता रहा जो आज भी प्रचलन में है। शाहाबाद की बनावट मुगल संस्कृति की स्पष्ट छाप लिये है।

यह भी कहा जाता है कि सहरिया मूलत: भील ही हैं। बहुत से रीतिरिवाज संस्कार आज भी इनके भीलों से मिलते-जुलते हैं। एकबार भयंकर अकाल पड़ा तो अपनी भूख बुझाने के फलस्वरूप कुछ भीलों ने गाय का मांस खा लिया। जब इस बात का पता जात वालों को लगा तो उन्होंने उन लोगों को जाति से बहिष्कृत कर सेरी बाहर कर दिया। सेरी बाहर के लोग सेरिया नाम से सम्बोधित किये जाने लगे। कहते हैं, ये ही सेरिये आगे जाकर सहरिये-सहरिया कहलाये।

सहरिया लोगों की अधिकांश गोत्रें भीलों से मिलती-जुलती हैं। राजपूतों में भी इनकी कुछ गोत्रें मिलती हैं। कुछ गोत्रें गांवों के नाम पर बनी कही जाती हैं। पूछने पर मालूम हुआ कि अधिकांश गोत्रें लिया या फिर रिया नाम लिये हैं। कुछ की नामावली इस प्रकार है-

(1) अलेरिया (2) कंडवाल (3) कनछेरिया (4) कनवाड़ (5) करोन्द (6) कलखोरिया (7) कसरिया (8) कारूरिया (9) करूरिया (10) कालुजा (11) कुडावल (12) कुलहर (13) कुश्याल (14) खमानिया (15) खवाई (16) खाड़िया (17) खुल्लर (18) खुशियार (19) रवेती (20) गरवड़ (21) गरवाड़ (22) गोगरिया (23) गोरनिया (24) चकरिया (25) चौधरिया (26) चौहान (27) जरनोलिया (28) जेसवाल (29) जेसवाड़िया (30) डोडिया (31) डोटिया (32) ढेबरिया (33) दवरिया (34) देवरिया (35) नगोरिया (36) नागईया (37) नोगापन (38) परागिया (39) पराजिया (40) नेवतिया (41) नोगाया (42) पनिनालिया (43) पाटेलिया (44) पाटीजा (45) पारोन्दिया (46) पारोनी (47) पीरोन्दिया (48) बगरूलिया (49) बबुलिया (50) बरबुड़िया (51) बरबुलिया (52) बरेड़िया (53) बागुध्या (54) बाघेला (55) बारिपेलिया (56) बांसबोड़ी (57) बिजलिया (58) बोरड़िया (59) भागल्या (60) भीलोरिया (61) मारिया (62) मोहल (63) रथवाड़ (64) रववाई (65) राजेरिया (66) रीछोहन (67) रेवाड़ (68) रेवाड़ा (69) रेवोड़ा (70) वागुध्या (71) सपोरिया (72) सीमलिया (73) सेमरिया (74) सोलंकी (75) सोलिया (76) सोहरा (77)चाकरिया ।

सहरियों के घर बांस-लकड़ी तथा घासफूस के बने होते हैं। वृक्षों के सहारे ये लोग अपने मकान बनाते हैं। गरीबी में जीवन काटने के फलस्वरूप घर में कोई खास सामान नहीं होता। फटी हुई गुदड़ी, मिट्टी का तवा, लकड़ी का चाटू, बांस का टोकरा, घट्टी, मिट्टी का घड़ा और कुल्हाड़ी यही सबकुछ है सहरियों का। पुरुष प्रधान इस जाति में पुरुषों की संख्या अधिक पाई जाती है। यह संख्या औरतों की तुलना में सवाई-डेढ़ी होती है। इन लोगों की बस्ती 'सेहराना' कहलाती है। इसी बस्ती के बीच एक सार्वजनिक स्थान होता है जहां सामूहिक सार्वजनिक रूप से सामाजिक धार्मिक उत्सव आयोजित होते हैं। यह स्थान झूंपा अथवा बंगला कहलाता है।

कुल्हाड़ी का महत्त्व इस जाति में सबसे अधिक है। कुल्हाड़ी मुख्य हथियार भी है और जीवन-यापन का औजार भी। एक कुल्हाड़ी अपने कंधे पर लेकर सहरिया कहीं भी निकल जायेगा। इससे वह भूखा भी नहीं मरेगा और अपने जीवन की रक्षा भी कर लेगा। जंगली जानवरों- चीता, रींछ जैसे हिंसक पशुओं का मुकाबला सहरिया लोग अपनी कुल्हाड़ी से ही कर लेने में सक्षम होते हैं। एक कुल्हाड़ी से वह सब तरह के काम कर लेता है। कुल्हाड़ी के इसी महत्त्व के कारण विवाह-शादी में दापे के रूप में वर पक्ष की ओर से वधू पक्ष को अनिवार्यत: कल्हाड़ी देने की प्रथा है।

सहरियों में डीकरी का जन्म अच्छा समझा जाता है। पुत्र जन्म के पांच दिन बाद जबकि लड़की जन्म के तीन दिन बाद ही जच्चा को बाहर लाकर गाजाबाजा प्रारम्भ कर दिया जाता है। पहले दाई सारे घर को गोबर-मिट्टी से लींपकर शुद्ध करती है फिर घर की स्त्रियां उसके लींपे पर लींपती हैं। दरवाजे के एक ओर गोबर के बने पांच पिंड तथा दूसरी ओर सात पिंड रख दिये जाकर उनमें घास के तिनके

लगा दिये जाते हैं। यह क्रिया साथिया बनाना कहलाती है। इसी दिन रातिजगा किया जाता है। जच्चा-बहिन-बेटी को घाघरी-ओढ़नी पहनाई जाती है। गाय-भैंस आदि पशु भी दिया जाता है। 90 दिन के बाद उजला स्नान (शुद्धि-स्नान) कराया जाता है।

नवजात शिशु की बहिन अथवा बुआ उसका रास्ता रोककर नेग प्राप्त करती है। यह नेग स्थिति के अनुसार रूपये से लेकर जानवर अथवा जेवर तक के रूप में दिया जाता है। इस समय गेहूं-चने की घूघरी, घूघरी-बताशा अथवा गुड़-घूघरी बांटी जाती है। प्रसव का दायित्व इन्हीं की जाति की दाई का होता है। रातिजगे में मुख्यत: भेरू-भवानी के पूजा गीत गाये जाते हैं। हरदोत के एक गीत में तो जच्चा को देवी तथा बच्चे को हरदोत यानी भैरव का ही प्रतिरूप कहा गया है।

सहरियों में बहु विवाह जैसी प्रथा नहीं है। पति के लिए बहु पत्नीदार होना और पत्नी के लिए बहु पतिवान होना भी अधिक नहीं पाया जाता। जहां तक बन पड़ता है उसी गांव में इनके विवाह भी नहीं होते। अपनी मां की और पिता के मां की गोत्र में भी इनके विवाह सूत्र नहीं जुड़ते। सगाई-विवाह का प्रस्ताव लड़के वाले की ओर से लड़की वाले के यहां रखा जाता है। यदि कोई लड़की वाला अपनी ओर से यह पहल करता है तो लड़की में कोई-न-कोई ऐब मानी जाती है।

लगन निकलवाने के लिए लड़के वाले की ओर से 40-50 व्यक्ति मिलकर लड़की के घर जाते हैं और वहां सभा बुलवाते हैं। लड़की वाले सगासोई तथा पंच जाजम पर आमने-सामने बैठकर सावे निकालते हैं। सावों में विन्याग स्थापना, हल्दीपीठी का मुहूर्त, फेरों का तथा बरात विदाई का दिन निकाला जाता है। इस समय की विवाह की तथा खानपान की सारी व्यवस्था लड़की वालों की ओर से की जाती है। इसी समय जितने रूपये लड़की वाले की ओर से देने तय किये होते हैं वे दे दिये जाते हैं। उन्हीं से विवाह सामग्री खरीद ली जाती है। बरात एक दिन पहले पहुंच जाती है। यह दिन पड़ता का दिन कहलाता है।

सगाई में लड़के का पिता पुत्रवधू की गोद भराई करता है। कन्या को एक पटले पर बिठाई जाकर उसके ओरेदोरे औरतें बैठकर गीत गाती हैं। लड़के का पिता इस समय कन्या के गले में कंठी पहनाता है और कन्या को रूपया नारियल देता है जिसे कंठी टका बांधना कहते हैं। पटेल इस समय सभी के हल्दी का टीका करता है।

बारात की अच्छी अगवानी की जाती है। घासफूस तथा हरे बांसों के मण्डप में अग्नि की साक्षी में सात फेरों में पाणिग्रहण संस्कार होता है। सातों फेरे वर ही खाता है। विवाह में खट्टी छाछ में गुड़ मिला राली के चावल बना सबको खिलाये जाते हैं। यही भोज और अच्छी रसोई होती है जो गोरस चामर की रसोई नाम से जानी जाती है। स्त्री-पुरुष बराती सभी नये कपड़ों तथा गहनोंगांठों में छमक छैले बने होते हैं।

स्त्रियां गीत गाती नाचती रहती हैं। बराती तथा अन्य पुरुष चंग बजाते हैं। पुरुषों में से उसी समय एक प्रमुख नृत्य निमग्न हो उन स्त्रियों के पास जाता है और उनमें से जो उसे प्रिय लगती है, उसकी ललाट पर एक रूपया न्यौछावर कर चिपका दिया जाता है। रूपया यदि चिपक गया तो वही महिला रख लेती है अन्यथा ढोल ढप बजाने वाले को दे दिया जाता है। ढोल ढप बजाने का काम भंगी करता है जिसे अच्छा नेग दिया जाता है।

हर संस्कार-त्यौहार पर सहरिया लोगों में शराब का प्रचलन है। यह शराब वे स्वयं ही तैयार करते हैं जो बबूल के नलियों व महुआ के फूलों से बनाई जाती है।

सहरिया जाति में नाता प्रथा प्रचलित है परन्तु पुरुष का कुंवारेपन में नाता करना ठीक नहीं समझा जाता। यदि कोई नाता कर लेता है तो उसे कुंआरा पाप चढ़ जाना मान लिया जाता है। तब प्रायश्चित के रूप में जाति वालों को दावत दी जाती है जो मण्डप की दावत कही जाती है। इसी दिन नाता करने वाले को फेरे की रस्म पूरी करने का टोटका करना पड़ता है। तब मण्डप के नीचे या तो कोरे घड़े को रख दिया जाता है या नाते लाई स्त्री की नाक की बाली वहां रखकर उसके सात फरे लेने पड़ते हैं। यह क्रिया घड़ा फेरा या बाली फेरा कहलाती है।

सुहागिन को नाते लाने की स्थिति में पंच झगड़े का रूपया उसके छोड़े गये पति को होने वाले पति से दिलवाता है। विधवा स्त्री नाते लाई जाती है तो पंच उसके माता-पिता को नातेदार से दण्ड का जुर्माना दिलवाते हैं। इन परिस्थितियों में पुरुष को प्रीतिभोज देना अनिवार्य होता है अन्यथा नाता अवैध कहलाता है।

नाता प्रथा का विपरीत आचरण मजरखा प्रथा कहलाती है जिसमें कोई पुरुष किसी स्त्री को नहीं लाकर कोई औरत ही किसी पुरुष को अपने घर में घुसा लेती है। ऐसा विधवा औरतें ही करती हैं। यदि मजरखा करने के बाद उसके मृतक पति से कोई पुत्र होता है तो वह उसके असली पिता की संपत्ति का अधिकारी होता है।

सहरियों में प्राय: हर कार्य पंचों के सहयोग एवं मार्गदर्शन के बिना पूरा नहीं होता। पंच ही बड़े-बड़े फैसले करते हैं। झगड़ों को निपटाते हैं और वैवाहिक बन्धन जैसे महत्त्वपूर्ण मसलों पर निर्णय देते हैं। मुख्य पंच पटेल कहलाता है। यह पद वंश-दर-वंश चलता रहता है। पटेल या तो अयोग्य हो अथवा उससे कोई बड़ा अपराध हो गया हो तो ही उसे हटाया जा सकता है।

सामान्यत: पंचायत के तीन रूप हैं-

(1) पंचताई : यह पंचायत सहरना स्तर पर होती है। इसका मुख्य पटेल होता है।

(2) एकादसिया पंच : यह पंचायत एकादश अर्थात् ग्यारह सहरनाओं का सम्मिलित रूप है। इसमें सभी सहरनाओं के पटेल सम्मिलित होकर सामान्य सहमति से निर्णय लेते हैं।

(3) चौरासिया पंच : इसमें सभी सहरनाओं के पंच यानी पटेल सम्मिलित होकर निर्णय लेते हैं। यह सर्वोच्च पंचायत संगठन है। इसके निर्णय सर्वसम्मत होते हैं।

फसली नृत्यों का इनमें विशेष प्रचलन है जो फसल की पकाई पर किये जाते हैं। ऐसे गीत झेला कहलाते हैं जो एक-दूसरे के झेले (सहारे) पर चलते हैं। सामूहिक रूप से प्रारम्भ होने वाले गीतों में एक पुरुष आरम्भ में हां से अलाप के साथ पंक्ति प्रारंभ करता है तब अन्य उसको झेला देते नृत्यमय करते हैं। इस समय कांसी की थाली बजाई जाती है। थाली के अभाव में कटोरी बजाते हुए भी देखा गया है। नृत्य के दौरान सभी हाथों में रूमाल अथवा अंगीछे हिलाते-उठाते चकरीमय होते हैं।

**- शेष पृष्ठ सात पर**

शब्द रंजन

उदयपुर, बुधवार 01 दिसंबर 2021

सम्पादकीय

# अजब गजब के नाम

नामकरण की दुनिया बड़ी विचित्र है। यह मनुष्य की ही बलिहारी है कि उसने पूरी दुनिया में अपनी पहचान बनाने के लिए अपने ही नहीं, अपने से जुड़े सभी के नाम संस्कारित कर दिये। इससे उसकी मेधा, बुद्धिमत्ता, सोच, समझ और दृष्टि का पता चलता है। यह अध्ययन भी बड़ा दिलचस्प और अनेक नई खोजों को जनम देकर ज्ञान-विज्ञान के कई गवाक्ष खोलने की गुंजाइश देता है।

लगता है, पहला मानव जहां भी, जिस रूप में भी जन्मा युगल रूप में, नर-मादा रूप में जन्मा होगा। अकेला पुरुष और अकेली नारी से न तो कोई परिवार, न कोई समाज और न ही कोई समूह, समुदाय और कबीला ही बना।

सर्वाधिक प्रभाव तो कुदरत का रहा। पैदा होते ही वह कुदरता किंवा, प्राकृतिक वातावरण पाकर बढ़ा और उसके संकेत, उसकी हलचल, उसके स्वभाव, उसकी वृत्ति, उसकी चर्या में अलल-खलल, अलोड़न-विलोड़न होते उसका सहधर्मी, सहस्पर्शी, सहदर्शी और सहचर्यी बना रहा।

अनेकानेक जीवयोनियों में पड़ते-दड़ते पंगुराते लाखों-करोड़ों वर्षों बाद कोई समझ शक्ति का पिण्ड होते-होते मनुष्य की शक्ल धराया गया। धीरे-धीरे श्रुत और स्मृति ने जीवन यापन के मापदण्ड बनाते विधिवत जीवन को जीना शुरू करते भी विराम नहीं लेकर अन्वेषित मन को लगातार नवनवोन्मेषकारी शक्ति-पद्धति का सोपान बनाते कुछ नया करने की धुन पाली होगी।

ऐसे युग चरण नापते आज की दुनियां में हमराही हुआ मनुष्य अब भी चुप मौन नहीं है। वह नये-नये पट खाले जा रहा है। नये-नये देव बनाता जा रहा है। शास्त्र में जो कुछ वर्णित होता था वह तो होकर बंध गया पर यह छूट लोक को मिली हुई है जिसमें वह आज भी बाजी मारता बाजीगर बना हुआ है।

देखिये न! देवता ही लोक में कितने अजीब, गरीब, अजीबोगरीब, अजबगजब नामधारी हो गये हैं। धोबी के पछांट-पछांट कर कपड़े धोने पर पछांटदेव, पटक-पटक कपड़े धोने पर पटकना देव, अहीर के गाय का पैर बांध, नूजणा देने पर नूजणदेव, बांधने के रस्से को काछन कहने पर काछनदेव, लोहार के फूंकनी से फूंक मार आग धधकाने पर धुकधुका देव, पानी टेढ़ा कर सिंचाई करने पर टेड़ादेव, ब्राह्मणों द्वारा ठनठन बजते सिक्के चढ़वाने पर ठनठनादेव, भंगी द्वारा झूठा अथवा ऐंटवाड़ा बचा भोजन उठाने पर झूठनदेव अथवा ऐंटवाड़ी माता तथा सोने-चांदी की दुकानों के पास बहती नाली की धूल धोकर सार तत्व निकालने से धूलधोई माता जैसे नाम भले ही अजीब लगते हों पर उनसे सम्बन्धित कारू वालों को तो रूजक रोटी ही देते हैं।

पत्र-पिटारी

## शब्द रंजन सशक्त ज्ञानरंजन

शब्द रंजन का दीवाली अंक इस बार बड़ी सज्जा और पूरे रंगमिजाज से निकला है। सामग्री भी ऐसी दी है कि पुराने जमाने की दीवाली में, ठेठ राजा राम के समय में पहुंच कर जैसे दीवाली मना रहे हैं। सच तो यह है कि लोकाश्रय ही इन सारी परम्पराओं और पिछले सारे समयों को जीवित प्रत्यक्ष करने की ताकत रखता है।

जो विद्वान् हर समय अपनी बात कहते वेद-पुराण, पुराने ग्रन्थों, पुराने लेखकों और पुराने कथनों का सहारा लेते हैं वे यह भूल जाते हैं कि उन सबसे पहले भी लोकधारा का प्रवाह ऐसा ही रहा है। उसी का प्रभाव उन्होंने यूं-का-यूं ग्रहण किया है। तब का लोक अपनी श्रुतियों और स्मृतियों का महाबली था। वह हर कथन और कहे हुए या सुने हुए को शब्दशः धारण करता उसे अपने साथ-साथ अपने साथ की छोटी पीढ़ी को मां के दूध की तरह पुष्ट करता था। वही लोक कंठानुकंठ अपनी कंठी अगली पीढ़ी को पहनाता चलित फलित हुआ हों दिखाई दे रहा है। अपने शब्द ज्ञान के माध्यम से शब्द रंजन की यह सेवा इतिहास के सेतु बनाता पुरातन ज्ञान का अहुनापहुना ही बना हुआ है।

**- ज्ञानरंजन, कानपुर**

## शब्द रंजन से साधारण-असाधारण मिलाप

शब्द रंजन में केवल शब्दों का रंजन ही नहीं, अपितु अर्थ का अंजन और भावों का स्पंदन भी है। इसमें प्रकाशित लेखों में भूले-बिसरे शब्दों व लोकोक्तियों का बेजोड़ प्रयोग विस्मृत होती जा रही परम्पराओं की याद दिलाते हैं। उन साधारण-असाधारण लोगों से भी मिलाते हैं जिनके बारे में कोई ख्याल ही नहीं करता।

**- डॉ. दिलीप धींग, चैन्नई**

# जैन दिवाकर चौथमलजी का मेवाड़ विचरण

**- डॉ. दिलीप धींग -**

जैन दिवाकर संत चौथमलजी महाराज ने भारत की जिन 133 रियासतों और ठिकानों को प्रभावित किया उनमें मेवाड़ भी एक है। उनकी प्रेरणा से यहां अनेक अगता (अहिंसा दिवस) घोषित किये गये। इनमें पर्युषण, महावीर जयन्ती, पार्श्वनाथ जयन्ती मुख्य थे। इन दिनों में मद्य-मांस की बिक्री, पशु-पक्षी वध और बूचड़खानों के संचालन पर पूर्ण प्रतिबंध रहता था।

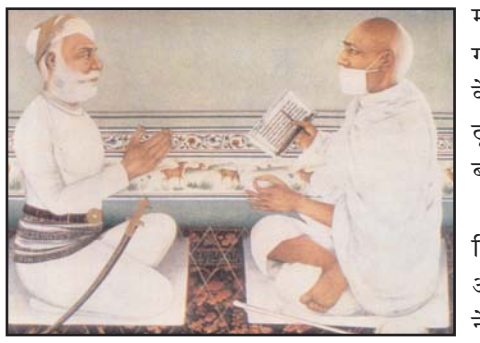

चौथमलजी ने उदयपुर में सन् 1909, 1926, 1934 और 1939 में कुल चार चातुर्मास किये। प्रथम चातुर्मास में महाराणा के निजी सलाहकार कोठारी बलवंतसिंह ने दिवाकरजी की खूब सेवा की। इससे अगले चातुर्मास में समोर बाग और शिव निवास में महाराजश्री ने प्रवचनों में उत्तराध्ययन सूत्र के छत्तीस अध्ययनों के साथ जैन धर्म, दर्शन, संस्कृति और आगम सम्बन्धी अनेक जिज्ञासाओं के समाधानों से श्रोता समुदाय बड़ा प्रभावित रहा।

सन् 1934 का चातुर्मास घण्टाघर के निकट बनेड़ा राव की हवेली में हुआ। इसमें मुनि छोटेलालजी की लम्बी तपस्या पर अगता पलवाया गया जिससे सैकड़ों बकरों को अभयदान मिला। अंतिम 1939 के चातुर्मास में मुनि नेमीचन्द्र के 53 उपवास की तपस्या की सम्पूर्ति पर महाराणा भूपालसिंहजी ने श्री जैन महावीर मण्डल को एक हजार रुपये का सहयोग किया। इन चातुर्मासों में महाराणा फतहसिंहजी और फिर महाराणा भूपालसिंहजी ने महलों में गोचरी में भगवान एकलिंगनाथजी के महाप्रसाद में से कस्तूरी, गर्म दूध, लवंग आदि शुद्ध आहार बहराया।

उदयपुर के अलावा नाथद्वारा, चित्तौड़गढ़, बड़ीसादड़ी, कानोड़ आदि स्थानों पर भी जैन दिवाकरजी ने वर्षावास किये साथ ही गाँव-गाँव, ढाणी-ढाणी में विचरण कर सभी जातियों और वर्गों में अहिंसा, व्यसन-मुक्ति, शाकाहार, कुरीति-उन्मूलन आदि का प्रचार किया। अनेक लोगों ने शिकार, मांसाहार, पशु-बलि का त्याग किया और जगह-जगह मानवसेवा और जीवदया के प्रकल्प शुरू हुए।

# छत्तीस का आंकड़ा व्यवस्था विरोध का प्रतीक

**जयपुर (वि.)।** कलमकार मंच द्वारा डॉ. लालित्य ललित द्वारा सम्पादित व्यंग्य संग्रह 36 का आंकड़ा के लोकार्पण समारोह में संपादक डॉ. प्रेम जनमेजय ने कहा कि व्यंग्यकार को एक चिन्तक होने के साथ आत्मविश्लेषक भी होना चाहिए। जो 36 का आंकड़ा रखेगा वह व्यंग्यकार नहीं हो सकता।

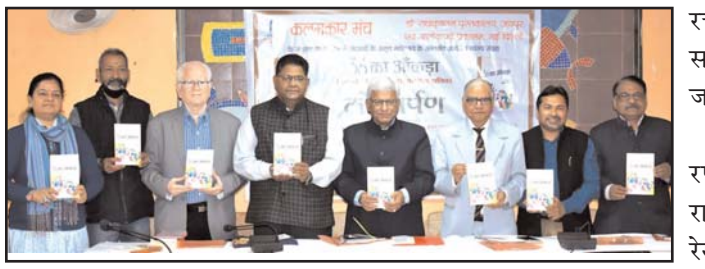

अध्यक्षता करते फारूक आफरीदी ने सामाजिक विद्रूपता को व्यंग्य की जननी बताया। डॉ. यश गोयल ने कहा कि देशभर में हर जगह 36 का आंकड़ा नजर आता है जो व्यंग्य उत्पादन का केंद्र बनाती हैं। डॉ. लालित्य ललित ने 36 व्यंग्यकारों की रचनाओं के चयन और सम्पादन की विस्तृत जानकारी दी।

समारोह में रणविजय राव, रामगोपाल शर्मा तथा रेखा यादव ने भी विचार व्यक्त किये। निशांत मिश्रा ने आगुन्तकों का स्वागत किया।

**- निशांत मिश्रा**

# विजय वर्मा तथा डॉ. प्रकाश खाण्डगे को कोमल कोठारी पुरस्कार

**उदयपुर (ह.सं.)।** पश्चिम क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र की ओर से कलामर्मज्ञ डॉ. कोमल कोठारी की स्मृति में प्रति वर्ष दिया जाने वाला डॉ. कोमल कोठारी स्मृति लाइफ टाइम अचीवमेंट लोककला पुरस्कार इस वर्ष राजस्थान के विजय वर्मा एवं महाराष्ट्र के डॉ. प्रकाश खांडगे को राज्यपाल कलराज मिश्र तथा केन्द्र निदेशक श्रीमती किरण सोनी गुप्ता द्वारा प्रदान किया जायेगा।

सन् 2017 से शुरू हुआ यह पुरस्कार प्रारम्भ में लोककलाकार बंशी खिलाड़ी को दिया गया। पिछले दो वर्षों से इसे दो व्यक्तियों में बांटकर सवा-सवा लाख का कर दिया गया। अच्छा हो इनमें एक लोककलाकार तथा दूसरा लोककला मर्मज्ञ हो।

# डॉ. माहेश्वरी का निधन

**उदयपुर (ह.सं.)।** जयपुर में गत दिनों 93 वर्षीय डॉ. हीरालाल माहेश्वरी का निधन हो गया। राजस्थान विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में रहते उन्होंने राजस्थानी साहित्य पर गहन शोधानुसंधान कर अपनी प्रखर पहचान दी। कलकत्ता विश्वविद्यालय से विश्नोई सम्प्रदाय के जांभोजी पर उन्होंने डी.लिट् की उपाधि ली। सेवानिवृत्ति के पश्चात एक लम्बा समय वे साहित्य जगत से चुप-मौन ही रहे और साहित्यिकों ने भी उनकी कोई सुध नहीं ली।

उनका स्मरण कर डॉ. महेन्द्र भानावत ने कहा कि वे साहित्य पढ़ने, साहित्यिकों से भेंट करने तथा साहित्य की पोथियां खरीदने में सदैव आगे रहे। ऐसा अनेक बार हुआ जब वे बच्चों के साथ खरीदफरोख्त करने गये तब भी किताबें खरीदकर लाते रहे। इस प्रसंग पर डॉ. भानावत ने शिव 'मृदुल' से नीमच के हास्यकवि दुर्गेश नागदा 'हंसमुख' रचित यह पेरोड़ी सुनाई-

आठ प्हैर कस्यो कविता को गांदो,
कां म्हारी छाती में रावड्यां रांदो।
दो बेटा-बेटी का बाप वेइग्या,
पण मंगाऊं तो लसण ने लावो कांदो।।

# मन्नू भण्डारी के निधन पर श्रद्धांजलि

**जयपुर।** नारी मन की दुविधाओं को जितने प्रभावशाली ढंग से मन्नू भण्डारी ने अभिव्यक्त किया वह दुर्लभ है। ये विचार 'शब्द संसार' द्वारा आयोजित शोक सभा की अध्यक्षता करते हुए पूर्व जनसम्पर्क निदेशक एवं वरिष्ठ लेखक डॉ. अमरसिंह राठौड़ ने व्यक्त किए।

सभा में श्रीकृष्ण शर्मा, आर. के. शर्मा, नवल किशोर पांडे, बणज कुमार तथा फारूक आफरीदी ने कहा कि उनकी कथाओं पर बनी फिल्म तथा पटकथा के कारण उन्हें खूब ख्याति मिली। अपने उपन्यास आपका बंटी एवं नाटक महाभोज के कारण उनका कीर्ति-यश अमर रहेगा।

**-श्रीकृष्ण शर्मा**

## अपना देश अपनी संस्कृति

# सोने का पहाड़

मेवाड़ का क्षेत्र मगरे-मगरी, घाटे-घाटी और नदी-नालों का क्षेत्र रहा है। सरपट और सीधे रास्तों का यह अंचल कभी नहीं रहा। उदयपुर के आसपास ही अगणित घाटे-घाटियां तथा मगरे-मगरियां हैं। इनमें सबसे महत्वपूर्ण इण्या मगरा है। छह हजार बीघा में फैला यह मगरा उदयपुर के दक्षिण-पश्चिम में है।

यह उदयपुर के तेरह किलोमीटर दूर नांदेश्वर से प्रारम्भ होता है जो चौकड़िया, छोटी ऊंदरी, बड़ी ऊंदरी, डागल तथा खरपीणा गांव तक पन्द्रह किलोमीटर की लम्बाई नापता पीछे की ओर मुड़ाव खाता हुआ रमणी घाटी, गारिया नाल, आमदरी, फटादरा, लेथ, झरणा महादेव, नवा खेड़ा, गेहरीवाला महादेव तथा नोरा गांव को छूता है। इस प्रकार यह तीस किलोमीटर की परिधि लिये है।

बड़ी ऊंदरी के उदा पारगी (102) ने बताया कि इण्या पहाड़ पर पांडवों ने तपस्या की। पांडवों के गुरु द्रोणाचार्य की धूणी भी वहीं है। इस धूणी पर माटी की मोटी परत जम गई है जिसे खंगालने पर राख ही राख मिलती है। इसी के पास एक संत ने तपस्या की जिसकी त्रिशूल रोपी हुई है।

धूणी के पास ही मगरा बाबा का स्थान है। किसी समय वह स्थान सघन वृक्षों से आच्छादित था। इसके पास ही पानी से सराबोर कुंड था। तब पूरा पहाड़ विभिन्न प्रकार के वृक्षों तथा जड़ी-बूंटियों से खुशनुमा बना हुआ था। पक्षियों का कलरव तथा जंगली जानवरों का बसेरा एक नई रौनक देता था लेकिन आज लगता है सब कुछ उजड़ गया है और पुरानी बातें हवा हो गई हैं।

नाथू डूंगरी ने बताया कि सुमेर, ढाकणिया और काइला जैसे नामी पहाड़ों के साथ इण्या का नाम चला आ रहा है। इस पहाड़ पर पांडवों के बाद भी कई संतों ने तपस्या की। पानी तब भरपूर था लेकिन कुंड में एक औरत ने स्नानानकर उसे गंदा कर दिया। संत ने तब उस कुंड पर अपना खप्पर डाला और शिला खिसका दी। इससे कुंड में पानी की एक बूंद भी नहीं रही पर उस खप्पर का चमत्कार रहा कि वह नांदेश्वर जा प्रकट हुआ जहाँ पानी ही पानी हो गया। कितना ही अकाल पड़े वहां पानी की धारा सदैव एक सी बहती रहती है। नांदेश्वर में खलकी गंगा अदीठ में इण्या की ही गंगा है।

मगरा बाबा के प्रति आदिवासी लोगों की बड़ी आस्था और अटूट विश्वास है। ये इण्या बाबा लोकजीवन में मगरा बा, मगरा बाबा, इण्या बावसी के नाम से भी बहुप्रसिद्ध हैं। एक-दो-जगह बातचीत में लोगों से इसका द्रोणा बाबा नाम भी सुनने को मिला।

मंगला पारगी ने इण्या पहाड़ पर देखे-सुने वृक्षों के नाम गिनाते हुए बताया कि कड़ैया, धामड़ा, खरण्या, कोकर, केमड़ो, उंड्यो, कोली, हलदू, गांगली, बड़गूंदा, बिल्ला, सीताफल, टेमरू, बांस, कबीता, करमदा, बोर, खांखरो, नीम, पीपल, बड़, धावड़ा, उंब्या, पलक, हालर, गोदल, मूका जैसे वृक्षों की बहार रहती थी। धरणा तथा खरण्या गर्मी में फल देते।

धामणा वर्षा काल में फलता। उंड्यो पकने पर गुलाब जामुन जैसा मीठा फल देता। गांगली का फल गूंदे जैसा होता। यह फल और इसके फूल-पत्ते कोई खास उपयोगी नहीं हैं। फल की लूगदी बना मछली को डालने से वह शीघ्र मर जाती है। मच्छी मारने वाले कभी इसको काम में लेते रहे होंगे। यह गर्मी में फैलता है। पूरे पहाड़ पर इसका एक वृक्ष देखा गया जो बड़ा ही सघन और हराभरा है। बांस को आदिवासी बाड़ी बोलते हैं। कहते हैं यह जब फैलता है तो धरती फोड़ निकलता है। पूरे पहाड़ पर मवेशी चरते हैं। इनमें कई मेंडे (मुड़े सींग वाले)और बांड़े (कटी पूंछ वाले ) होते हैं।

सोमवती अमावस्या को आसपास के गांवों तथा दूर-सुदूर के लोग इस पहाड़ की पैदल परिक्रमा करते हैं। परिक्रमा के दौरान यात्रियों को पहाड़ से जुड़े द्वादश शिवलिंग के दर्शनों का पुण्य मिलता है। द्वादश शिवलिंग में छह गुप्त तथा छह प्रकट हैं। प्रकट में नांदेश्वर महादेव, गेरी महादेव, काया महादेव, रेंगल महादेव, अमरख महादेव, तथा केदारनाथ महादेव हैं जबकि लेइके महादेव, झरणा महादेव, बड़बड़िया महादेव, फटादरा महादेव, आमदरी तथा कोईछा महादेव गुप्त की गिनती में आते हैं।

जेठी पूनम (ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमा) को प्रतिवर्ष बारह गांव के लोग मिलकर मगरे पर एकत्रित होते हैं। मगरे का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि दीवाली की धनतेरस को पल भर के लिए यह पहाड़ अपने समग्र रूप में सोने का हो जाता है। लेखक ने इसकी चढ़ाई भगवान कछावा के साथ की थी।

# ठगी बहुरूपिये का कमाल

एक वक्त था जब देवगढ़ के बहुरूपियों का कोई सानी नहीं था। इस क्षेत्र में भांडों ने अपनी कला-करिश्माई से दूर-दूर तक नाम कमाया। बड़ों-बड़ों को भ्रमित करने में भी महारत हासिल की। महाराणा सज्जनसिंह (1875-85 ई.)को भी उनके मुसाहिबों ने इस क्षेत्र के भांडों की प्रशंसा में कहा कि वे अपनी कला में बड़े पटु और पहुंचे हुए होते हैं। किसी को ठग लेना तो उनके बायें हाथ का खेल है। इस पर महाराणा ने चुटकी लेते हुए कहा, 'मुझे भी कोई ठगकर दिखाए तो जानूं।'

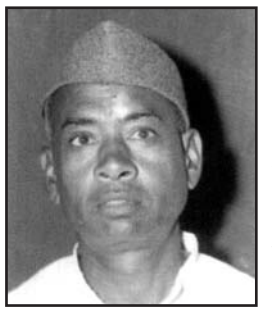

यह खबर भांडों के कानों में पड़ी। महाराणा को ठगना अपनी जान को जोखिम में डालना था। कोई तैयार नहीं हुआ मगर बहुरूपियों के लिए यह जबर्दस्त चुनौती थी। एकबार एक साधु ने महलों के पास अपना डेरा लगाया। लम्बी जटा, हष्ट-पुष्ट डीलडौल, कांतिमान चेहरा तथा ध्यान, योग, तंत्र एवं ज्योतिष विद्या का वह बड़ा जानकार था। जो भी उसके पास गया, चमत्कृत हुए बिना नहीं लौटा।

केलवा गांव के परसराम बहुरूपिया ने यह घटना सुनाते हुए मुझे बताया कि साधु के चमत्कारों से आमजन ही नहीं, विशिष्टजन भी बड़े प्रभावित हुए। महाराणा के पास खबर पहुंची। साधु के दर्शन की इच्छा जाहिर करने पर महाराणा का पदार्पण करवाया गया। विदा होते वक्त साधु ने आशीर्वाद देते हुए कहा, 'पूर्वजन्म के यश-प्रताप से आपको महाराणा की पदवी प्राप्त हुई। धन धान्य, ऋद्धि-सिद्धि की कोई कमी नहीं रहेगी। आपको कुछ समय हरि सुमिरण में व्यतीत करना चाहिए।'

लौटते समय महाराणा की दृष्टि साधु द्वारा फेरी जा रही बड़े-बड़े आकर्षक मनकों वाली माला पर पड़ी। दो दिन बाद महाराणा को साधु की कही हरि सुमिरण वाली बात याद आई। उन्होंने उस माला की चाहना की। साधु ने खुशी-खुशी माला दे दी। जब उसकी कीमत पूछी गई तो दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए साधु बोला, 'माला का क्या मोल, यह तो लाख की है।' उसका संकेत लाख से निर्मित माला से था पर महाराणा ने सूचना देने वाले के साथ एक लाख रूपया भिजवा दिया।

कड़ाके की सर्दी के दिनों में महाराणा ने अंगीठी के पास बैठकर वह माला फेरना शुरू किया। अंगीठी की तेज आंच से माला का मनका पिघलने लगा। महाराणा बड़े अचरज में पड़ गए। मुसाहिबों से इसका जिक्र किया। पता लगाने पर ज्ञात हुआ कि वह साधु फर्जी था। उसका नाम जोधा भांड था। वह देवगढ़ का रहने वाला था। महाराणा ने उसकी चतुराई, कलाबाजी और हिम्मत की प्रशंसा की तथा शाबाशी कहलवाई।

श्री परसराम से भारतीय लोककला मण्डल का जुड़ाव पहलीबार 1958 में आयोजित लोककला शिविर में हुआ। ये रात्रि कार्यक्रम में प्रतिदिन ही अपने विविध अजूबे स्वांग से दर्शकों को लोटपोट कर देते। सभी कलाकारों में ये सर्वाधिक घुलमिल गये और अपने वाक्चातुर्य, कलाबाजी, मृदुवाणी तथा नाट्यजनित अंगिक दरसाव के कारण सबसे अव्वल भी सिद्ध हुए। यही कारण रहा कि दो माह के चार शिविरों की समाप्ति के बाद आयोजित समारोह में राजस्थान विकास विभाग द्वारा इनका विशिष्ट सम्मान कर इन्हें 'कल्चरल एक्सटेंशन ऑफिसर' का सम्बोधन प्रदान किया गया। उसके बाद तो उन्हें कलामण्डल द्वारा आयोजित मुख्यत: लोकानुरंजन मेले में प्रतिवर्ष ही आमंत्रित किया गया। इनके कई स्वांगों की फोटोग्राफी तथा रेकार्डिंग भी की गई। मैंने तो इन पर बहुत लिखा।

# गंगालहरी का मधुर पाठ

भारतीय जनजीवन में लोकलहरी गंगा का महत्व कई रूपों में उद्घाटित हुआ है। इसके स्मरण ध्यान स्नान और स्पर्श मात्र से व्यक्ति का जीवन पवित्र हुआ समझा जाता है। गंगा के इस माहात्म्य से प्रभावित हो मेवाड़ महाराणा ने प्रात: स्नान के समय गंगालहरी का मधुर पाठ सुनना अंगीकार किया।

महाराणा राजसिंह (1754-1761) ने जब सुना कि पंडितराज की अशु काव्य प्रतिभा का ही चमत्कार रहा कि वे गंगालहरी का एक-एक श्लोक सुनाते गये और गंगा एक-एक सीढ़ी ऊपर चढ़ती गई। 52 वें श्लोक पर गंगा ने 52वीं सीढ़ी पर बैठे कविराज को अपने अंक मे लपेट पवित्र कर दिया। यह नजारा देख काशी के पण्डित स्तब्ध रह गये।

ऐसे यशस्वी रचनाकार को महाराणा राजसिंह ने उदयपुर आमंत्रित किया । उनसे गंगालहरी का पाठ सुना और उन्हें ऊंचा सम्मान दिया। इन्हीं पंडितराज के वंशज महाकवि पद्माकर हुए जिन्हें महाराणा भीमसिंह (1778-1828 ई.) ने गणगौर की सवारी देखने उदयपुर आमंत्रित किया।

राधेश्याम मेहता (79 )ने बताया कि उनके पिता गंगालाल महलों में चीणीवाले गोखड़े के बाहर महाराणा फतहसिंह को गंगालहरी सुनाया करते थे। उनका स्वर बड़ा ओजस्वी और मीठी गूंज लिये था। उनके दादा कृष्णदत्त और पड़दादा रविदत्त भी महलों में इसी कार्य के लिए नियुक्त थे। पिता गंगालाल अच्छे रचनाकार भी थे। जब वे अपनी जाति वालों के कोप के शिकार हुए तब गंगा की स्तुति में उन्होंने भी एक दोहा लिखा जिससे उनका कोप दूर हुआ। वह दोहा था-

गंग बसे शिव शीश पर, चरण बसे हरि गंग।
गंग करे उद्धार जग, शरण गंग के गंग॥

महाराणा भूपालसिंह को भी यह दोहा विशेष प्रिय लगा। गंगालहरी का प्रभाव यह रहा कि गंगालाल का पूरा परिवार ही गंगालहरी नाम से प्रसिद्ध हो गया। जानानी ड्योढ़ी के पीतांबरायजी के मंदिर में सेवापूजा का काम भी इन्हीं के जिम्मे था।

राधेश्याम स्वयं भी सधे हुए रचाकार हैं। महाराणा भूपालसिंह की जन्मगांठ पर जब दूध की रसोई को लेकर इनकी जाति में दो मत हो गये तब वे कुछ लोगों के साथ महाराणा के पास पहुंचे। अठारह वर्षीय राधेश्याम ने तब महाराणा के सम्मुख अपना लिखा यह छंद सुनाया-

हरि भक्ति सिद्धि मां ही अटल है ध्यान जाको
ऐसे भट्टजन ने रसोई बनाई है।
राधेश्याम सहित सर्व जाति जन भाखत यों
दूध की रसोई फीकी गंगाजल नीको है।।

गंगालाल के समान ही उच्च स्वर-माधुर्य की बुलंदगी सुन महाराणा बोले- यह गंगालाल का लड़का मालूम पड़ता है। उसका प्रभाव यह रहा कि समस्त जाति वाले एकमत हो गये।

उदयपुर के भटियानी चोहट्टा स्थित अपनी जाति के लक्ष्मीनारायण मंदिर में राधेश्याम ने अपनी ओर से गंगा की प्रतिमा स्थापित कराई तब गंगा की स्तुति में जो छंद उच्चरित किया उसका मोहक माधुर्य आज भी कइयों में गूंज देता आनंद विभोर कर रहा है। वह छंद इस प्रकार है-

बसत विरंची के कमंडल में देव धुनि
भजनन भगीरथ सुत सगर उबारेते।
कोटि-कोटि पापीजन अधम उबारे आप
भद्रजन दौरे हैं अभद्रजन तारे ते।।
ब्रह्मा की अतीव प्रिय शिवजी के शीश राजे
विष्णु पदी पायो नाम चरण पखारेते।
अजब अचंभो लक्ष्मीनारायण मंदिर में
अचल बिराजे गंगा लहरी सुनायेते॥

उल्लेखनीय है कि गंगालहरी के रचनाकार जगन्नाथ को शाहजहां ने अपना दरबारी कवि बनाकर पंडितराज की उपाधि प्रदान की थी। **- म. भा.**

## बाजार / समाचार

# स्कोडा की प्रीमियम सेडान स्लाविया का अनावरण

**उदयपुर (वि.)।** स्लाविया के बाजार में आगमन के साथ ही इंडिया 2.0 प्रोजेक्ट के तहत स्कोडा ऑटो के अगले चरण की शुरुआत हो गई है। स्लाविया का 95 प्रतिशत तक निर्माण-कार्य स्थानीय स्तर पर पूरा किया गया है। इसमें सुरक्षा के लिए बेमिसाल फीचर्स के साथ-साथ अत्याधुनिक इन्फोटेनमेंट सिस्टम मौजूद है। स्लाविया में लगाए गए टीएसआई इंजनों का पावर आउटपुट क्रमश: 85 किलोवाट और 110 किलोवाट है।

स्कोडा ऑटो के सीईओ थॉमस शेफेर ने कहा कि नई स्लाविया के साथ, हम अपने इंडिया 2.0 प्रोडक्ट कैंपेन के अगले चरण की शुरुआत कर रहे हैं। स्लाविया पूरी तरह से भारत में हमारे ग्राहकों की जरूरतों के अनुरूप है और इसका 95 प्रतिशत तक निर्माण स्थानीय स्तर पर किया गया है। हमें यकीन है कि कुशक और स्लाविया, दोनों असीम संभावनाओं वाले और निरंतर विकसित हो रहे इस बाजार का भरपूर लाभ उठाने में सक्षम बनाएंगे।

स्कोडा ऑटो फोक्सवैगन इंडिया प्रा. लि. के मैनेजिंग डायरेक्टर गुरप्रताप बोपाराय ने कहा कि कुशक के साथ इंडिया 2.0 प्रोजेक्ट की सफल शुरुआत हुई है, जिससे यह बात उजागर होती है कि वैश्विक सहयोग से भारत में हर लक्ष्य को हासिल करना संभव है। अत्याधुनिक तकनीक से सुसज्जित स्लाविया आपकी शान और स्टाइल का प्रतीक है। यह स्कोडा ऑटो के लिए विकास के एक नए क्षेत्र का भी प्रतिनिधित्व करता है।

स्कोडा ऑटो इंडिया के ब्रांड डायरेक्टर ज़ैक हॉलिस ने कहा स्लाविया हमें अपनी जड़ों की ओर वापस ले जाती है, क्योंकि हम ऑरिजिनल प्रीमियम सेडान को भारत लाने वाले ब्रांड रहे हैं। इस उद्योग जगत को बड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ा है, इसके बावजूद हमने अपने प्रोडक्ट कैंपेन को बरकरार रखते हुए 100 से अधिक शहरों में अपने नेटवर्क की पहुंच का विस्तार किया है।

# हिताची की एयर कंडीशनर बाजार के लिए महत्वाकांक्षी योजनाएं

**उदयपुर (वि.)।** भारत के सबसे बड़े एयर-कंडीशनर ब्राण्ड हिताची कूलिंग एण्ड हीटिंग के निर्माता जॉनसन कंट्रोल्स-हिताची एयर कंडीशनिंग इंडिया ने उत्तरी भारत में अपने ब्राण्ड की मौजूदगी को सशक्त बनाने तथा राजस्थान के तेज़ी से बढ़ते रिहायशी एवं कमर्शियल एयर कंडीशनिंग बाज़ार मे अपनी स्थिति को और मजबूत बनाने के लिए विस्तार योजनाओं की घोषणा की है।

जॉनसन कंट्रोल्स- हिताची एयर कंडीशनिंग इंडिया लि. के चेयरमैन एवं एमडी गुरमीत सिंह ने होटल हावर्ड जॉनसन में आयोजित प्रेसवार्ता में कहा कि राजस्थान हमारे लिए महत्वपूर्ण बाज़ार है और अकेले उदयपुर कमर्शियल एवं रिहायशी एयर कंडीशनिंग सेगमेन्ट में कारोबार में उल्लेखनीय योगदान देता है। मोहित कूलिंग सर्विसेज़ हमारे अच्छे चौनल पार्टनर हैं, जिनकी उदयपुर में सशक्त मौजूदगी है। उनके साथ हमारा गहरा रिश्ता है, हमें खुशी है कि हम लाईव वीआरएफ डेमो के साथ नया ऑफिस खोलकर उनके साथ एक नई यात्रा की शुरूआत करने जा रहे हैं।

हिताची के एक्सक्लुज़िव एक्सपर्ट लाउंज चौनल पार्टनर एवं मोहित कूलिंग सर्विसेज़ के मालिक अशोक जैन ने कहा कि हिताची के साथ हमारा लम्बा रिश्ता बेहद संतोषजनक रहा है। इसने हमें तेज़ी से विकसित होते रिहायशी एवं कमर्शियल कूलिंग एण्ड हीटिंग सेगमेन्ट में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने का अवसर दिया। हमें विश्वास है कि हिताची कूलिंग एण्ड हीटिंग के सहयोग से हम अपने उपभोक्ताओं को सर्वश्रेष्ठ सेवाएं प्रदान कर सकेंगे। उनके विविध उत्पादों की रेंज में कमर्शियल एसी और रेज़ीडेन्शियल एसी शामिल हैं, जो क्षेत्र के उपभोक्ताओं को बेजोड़ अनुभव प्रदान करते हैं। नई रणनीति और योजनाओं के साथ कंपनी जयपुर एवं उदयपुर के तेज़ी से विकसित होते बाज़ारों पर ध्यान केन्द्रित करते हुए विकास के नए अध्याय की शुरूआत करने जा रही है।

# 50 आईसीयू बेड की नई कोविड सुविधा का उद्घाटन

**उदयपुर (वि.)।** एलजी इलेक्ट्रॉनिक्स ने भुवाणा स्थित शहरी सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र में 50 आईसीयू बेड्स की कोविड सुविधा का उद्घाटन किया। उद्घाटन पूर्व केन्द्रीय मंत्री डॉ. गिरिजा व्यास, सीएमएचओ डॉ. दिनेश खराड़ी, विवके कटारा, जोइंट डायरेक्टर हेल्थ डॉ. जेड. ए. काजी, एलजी इलेक्ट्रॉनिक्स इंडिया के सेल्स हेड संजय चितकारा, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र के डॉ. महेन्द्र लोहार एवं डॉ. सोनल गुप्ता ने किया।

डॉ. गिरिजा व्यास ने एलजी के सहयोग तथा मेडिकल स्टाफ के सदस्यों द्वारा कोविड जैसी महामारी में किये गये साहसिक कार्य के लिए आभार जताया। डॉ. जेड. ए. काजी ने कहा कि ये उपकरण कोरोना की तीसरी लहर की आशंका को देखते हुए महत्त्वपूर्ण है। विवके कटारा ने कहा कि जो चिकित्सा उपकरण हॉस्पीटल में उपलब्ध कराये गये हैं उनसे निश्चित तौर पर मरीजों को लाभ मिलेगा।

संजय चितकारा ने कहा कि एलजी इलेक्ट्रॉनिक्स कोविड-19 के खिलाफ लड़ाई में आवश्यक चिकित्सा ढांचा प्रदान करने के लिए यूनाईटेड वे मुंबई, सीएसआरबॉक्स सहित अपने क्रियान्वयन पार्टनर्स के साथ मिलकर काम कर अस्पतालों को सहयोग कर रहा है। राजस्थान में इस अभियान के तहत शहरी सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र, भुवाणा, उदयपुर और शशिकुमारी सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र, सावर को सहयोग दिया गया है। इनको दिये गए सहयोग में मेडिकल बेड, वैंटिलेटर, अल्ट्रासाउंड मशीनें, ऑक्सीजन सिलेंडर एवं अन्य उपकरण शामिल हैं।

मेडिकल हैल्थ सर्विसेस, राजस्थान के डायरेक्टर डॉ. के. के. शर्मा ने कहा कि कोविड की दूसरी लहर ने सभी मोर्चों पर महामारी के कारण उत्पन्न हुई कठिनाइयों का समाधान करने के लिए प्रेरित किया। एलजी का यह प्रयास एक सराहनीय कदम है। यूनाईटेड वे मुंबई के चीफ एक्ज़िक्यूटिव ऑफिसर जॉज एकारा ने कहा कि हम आवश्यक मेडिकल उपकरण प्रदान करके अपनी स्वास्थ्यसेवा प्रणाली को मजबूत बनाने के लिए राजस्थान सरकार, एलजी एवं सीएसआरबॉक्स के साथ मिलकर काम करने पर गौरवान्वित महसूस कर रहे हैं। संचालन सीएसआरबॉक्स के भौमिक जे शाह ने किया।

# अनिल अग्रवाल 'एशियन बिजनेस अवार्ड्स 2021' से सम्मानित

**उदयपुर (वि.)।** गत 19 नवंबर को लंदन में आयोजित समारोह में वेदांता के चेयरमैन अनिल अग्रवाल को अनिल अग्रवाल फाउंडेशन द्वारा समुदाय में सकारात्मक और स्थायी बदलाव हेतु सामाजिक हित हेतु उत्कृष्ट कार्यों के लिये 'एशियन बिजनेस अवार्ड 2021' से सम्मानित किया गया। फाउंडेशन द्वारा शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, पानी, स्वच्छता और स्थायी जीवन पर ध्यान देने के साथ समाज हित को प्राथमिकता एवं प्रमुखत दी जाती है।

श्री अग्रवाल ने कहा कि इस पुरस्कार को प्राप्त कर मैं गौरवान्वित हूं। यूके अवसरों का देश है और इसने मुझे बहुत कुछ दिया है। समाजहित हेतु कल्याणकारी कार्य मेरे लिये प्राथमिकता है। मुझे समाज को पुन: देकर संतुष्टि मिलती है। अनिल अग्रवाल फाउंडेशन के सीईओ, डॉ भास्कर चटर्जी ने कहा कि हम सदैव समाज के उत्थान और संरक्षण के लिए प्रतिबद्ध रहे हैं। फाउंडेशन द्वारा देश में समाजोत्थान हेतु पोषण, महिला एवं बाल विकास, स्वास्थ्य देखभाल, पशु कल्याण और बुनियादी स्तर के खेलों पर ध्यान देने के साथ ही राज्यों में गांवों को कोरोना महामारी से मुक्त करने के लिय 5,000 करोड़ रुपये के निवेश से योजना प्रारंभ की गयी है। अनिल अग्रवाल ने पहले ही अपनी संपत्ति का 75 प्रतिशत सामाजिक भलाई और जनता के उत्थान के लिए देने का संकल्प लिया है।

# एचडीएफसी बैंक की माइक्रो-क्रेडिट सुविधा शुरू

**उदयपुर (वि.)।** एचडीएफसी बैंक ने स्ट्रीट वेंडर्स के लिए विशेष माइक्रो-क्रेडिट सुविधा कॉमन सर्विस सेंटर्स (सीएससी) के साथ पीएम स्ट्रीट वेंडर की आत्मनिर्भर निधि (पीएम स्वनिधि) को लॉन्च करने की घोषणा की। एचडीएफसी बैंक डिजिटल सेवा पोर्टल पर अपने ग्राम स्तरीय उद्यमियों (वीएलई) के लिए पीएम स्वनिधि की सुविधा प्रदान करेगा जहां विक्रेता पूरी प्रक्रिया को ऑनलाइन पूरा कर सकते हैं। यह 7 प्रतिशत की ब्याज सब्सिडी के साथ 10,000 रुपये का एक जमानत-मुक्त किफायती ऋण है। यह सरल आवेदन पर आधारित है।

एचडीएफसी बैंक की कंट्री हेड जीआईबी, सीएससी, ई-कॉमर्स, स्टार्ट-अप्स एंड इनक्लूसिव बैंकिंग इनीशिएटिव स्मिता भगत ने कहा कि बैंक में पीएम स्वनिधि के लॉन्च के माध्यम से हम अपने सीएससी वीएलई के माध्यम से छोटे स्ट्रीट वेंडरों को उनके समग्र विकास और आर्थिक उत्थान के लिए विशेष माइक्रो-क्रेडिट सुविधा प्रदान करने में सक्षम होंगे। हमारे सीएससी वीएलई अपने केंद्रों के आसपास के स्ट्रीट वेंडर्स को बिना किसी बाधा के क्रेडिट प्राप्त करने में सुविधा प्रदान करेंगे जो उन्हें कोविड 19 लॉकडाउन के बाद आजीविका फिर से शुरू करने में सहायता करेंगे।

वर्चुअल कार्यक्रम को आवास और शहरी मामले मंत्रालय, भारत सरकार के संयुक्त सचिव आईएएस संजय कुमार, सीएससी एसपीवी के प्रबंध निदेशक डॉ. दिनेश त्यागी तथा स्मिता भगत की उपस्थिति में आयोजित किया गया।

# एनसीसी का 73वां स्थापना दिवस मनाया

**उदयपुर (वि.)।** जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ डीम्ड टू बी विश्वविद्यालय द्वारा एनसीसी के 73वें स्थापना दिवस पर आयोजित समारोह की अध्यक्षता करते हुए कुलपति कर्नल प्रो. एस.एस. सारंगदेवोत ने कहा कि एनसीसी के स्टूडेंट्स बी और सी सर्टिफिक प्राप्त करने के साथ अब उच्च प्रशिक्षण के लिए अकादमिक क्रेडिट और केन्द्र एवं राज्य सरकार की रोजगार प्रोत्साहन योजनाओं में अतिरिक्त विशेष लाभ प्राप्त कर सकेंगे। एनसीसी के माध्यम से देश में ऐसे लाखों युवा तैयार हो रहे हैं जो राष्ट्रीय एकता, सामाजिक समरसता, सांस्कृतिक विरासत और संवैधानिक मर्यादाओं के प्रति पूरी तरह निष्ठावान हैं। वर्तमान में 15 लाख एनसीसी केड्टस देश सेवा में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। एनसीसी सेना के साथ दूसरी पक्ति में खड़े रहकर जिम्मेदारी का निर्वहन कर रही है।

एचआरएच ग्रुप के विरेन्द्रसिंह चम्पावत, ग्रुप कमांडर एनसीसी हेड क्वार्टर उदयपुर के कर्नल विनोद बांगरवा ने कहा कि एनसीसी विंग विश्व की सबसे बड़ी वर्दीधारी फोज है। इस पर हमें ही नही पूरे देश को नाज है। कार्यक्रम में डॉ. हिम्मत चूण्डावत, डॉ. तरूण श्रीमाली, कृष्णकांत कुमावत सहित एनसीसी केडेट्स उपस्थित थे।

# लोककला का उदय और विकास

-मार्कण्डेय-

लोककला की व्याख्या करते समय साधारणत: इतना तो सोचा ही जाता है कि वह समस्त कला, जो लोक द्वारा निर्मित होती है, इसके अन्तर्गत आ सकती है। अपने देश की प्रचारित भावानुभूति में इस 'लोक' शब्द के प्रयोग में अधिक व्यापकता है। यदि ध्यान से देखा जाय तो लोक-निन्दा, लोक-लज्जा, लोक-सम्मान इत्यादि शब्दों का प्रयोग करते समय हमारे मन में समस्त मानव-समाज के द्वारा होने वाली निन्दा, लज्जा और सम्मान का चित्रण रहता है। ऐसी अवस्था में 'लोक' शब्द की व्यापकता के अनुसार लोककला का तात्पर्य वह समस्त कला है, जो मनुष्य के द्वारा निर्मित होती रही या होती रहेगी।

'लोक' या 'फोक' शब्द की आधुनिक व्याख्या में धीरेन्द्रजी का मत चाहे मान्य हो, पर आदिमकाल की सभ्यता के मानवीय स्तर में इस प्रकार का कोई भी विभेद नहीं दिखता। समस्त मानव-प्रकृति की एकरूपता ही आदिम-मानव की मूल प्रवृत्ति थी। एक से कार्य, एक-सी संवेदनाएं, एक-सी चेष्टाएं, एक से रागात्मक सम्बन्ध इत्यादि उसकी विशेषता थी। वस्तुत: 'लोक' शब्द की आदिम मर्यादा का ही फल है कि आज भी उसकी व्यापकता का बोध शेष रह गया है। लेकिन सभ्यता और संस्कृति के विकास के कारण आदिम मानवता में एक ऐसा वर्ग बनता गया जो 'लोक' या 'फोक' से अपने को अलग समझने लगा। वैसे लोकगीत जर्मन के Volkslide का अपभ्रंश माना जाता है, जिससे भी जनता के समग्र सौन्दर्यमूलक भावों का प्रतिपादन होता है। यहां भी लोक शब्द का प्रयोग जनता की समग्रता का ही सूचक है।

ध्यानपूर्वक देखने से इस 'लोक' शब्द की वर्तमान अर्थगत परम्परा का उदय स्थान यही रहेगा। सम्भवत: यहीं से उसका क्षेत्र सीमित हो गया। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो इस विकास-काल में परिश्रमशील जनता के लिए, जिन्हें विद्वानों ने पिछड़ी हुई, मूर्ख और असभ्य कहा; 'फोक' या 'लोक' संज्ञा दी गई। दुनिया के अनेक देशों की श्रमिक जनता का इतिहास देखने पर इस बात की कुछ पुष्टि हो जाती है। हिन्दुस्तान में श्रमिक जनता को ज्ञानार्जन और पठन-पाठन से दूर रखा गया। 'शूप्त' को 'क्षुप्त' बता कर उसके लिए अलग से सामाजिक नियम गढ़े गये, जिससे उसे साधारण अपराध में भी भयानक दण्ड की व्यवस्था की गई। ग्रीस का विश्वविख्यात दार्शनिक अरस्तू तक गुलामी को स्वाभाविक बतलाता था। रोम में 'सिर्फ' की दुर्दशा का इतिहास पाठकों से छिपा नहीं है।

लोक प्रवृत्तियों की परम्परा का निरीक्षण करने पर पता चलता है कि इसके समस्त तत्व श्रमिक जीवन की विभिन्न अनुभूतियों से भरे पड़े हैं। पहलीबार जब आदिमानव ने शिकार की खोज में दौड़ लगाई होगी या पत्थर के एक पैने टुकड़े का निर्माण किया होगा या वृक्ष के कई पत्तों को जोड़ लिया होगा, तो वही उसकी कला का प्रारम्भ माना जाना चाहिये। पेरी के शब्दों में 'आदिमानव का उल्लास में लिया गया विकृत आलाप ही आदि संगीत है।' यह तो एक साधारण-सी मान्यता है। लोककला के उदय पर तो विद्वानों में बड़ा मतभेद है। इतना अवश्य है कि उनकी सम्मतियों के सार को दो मुख्य धाराओं में बांटा जा सकता है।

कुछ लोगों का कहना है कि लोककला का उदय आदिमानव के श्रम का प्रतिफल है। दूसरे शब्दों में उत्पादन ही आदि कला का जन्म स्थान है। इनका कहना है कि शान्ति और व्यवस्था में कला का जन्म हुआ। या यों कहें कि कला स्वत: मानव में फूट पड़ी या जंगलों में घूमते-फिरते हाथ लग गई।

शारीरिक परिश्रम के अलावा भी आदिमानव की अनेक समस्याएं थीं। प्रकृति के बाह्य तथा आन्तरिक रूप विधानों में अनेक ऐसी विस्मयजनक वस्तुएं थीं, जिनका कोई ज्ञानात्मक साक्षात्कार उनसे नहीं था। इसलिए उनके सामने प्राथमिक संघर्ष तो यही था कि वे प्रकृतिजन्य बाधाओं पर विजय प्राप्त करें। पहाड़ों, जंगलों तथा अंधेरी खौफनाक गुफाओं के अतिरिक्त वर्षारम्भ के काले कजरारे मेघ तथा बदलों का घर्षण भी उनके सम्मुख एक आसन्न विपत्ति के रूप में उपस्थित होता रहा होगा। इन बाधाओं का मुकाबला भी उन्होंने जरूर किया था और वह भी सामूहिक रूप में।

यदि वेदों को धर्मगाथा मान लिया जाय तो आदिमानव की प्रारम्भिक संवदेनाओं का एक वृहत् रूप सामने आता है। कृषि कर्म को प्रारम्भ करता हुआ वेदकालीन किसान कहला है- 'हे भूमि! मैं तुझे जहां से खोदूं, वहां शीघ्र ही हरा-भरा हो जाय। मैं तुम्हारे मर्म का आघात न करूं, मैं तुम्हारे हृदय को व्यथित न करूं। यह भूमि मेरी माता है, मैं पृथ्वी का पुत्र हूं। बिना स्वयं परिश्रम किये देवों की मैत्री प्राप्त नहीं होती।'

आदिमकाल में इसके लिए वहां के लोग एक जादू के पत्थर का टुकड़ा बहुत से टुकड़ों पर रखकर तब तक नाचते थे, जब तक कि वे बेहोश नहीं हो जाते थे। उनकी नृत्य-मुद्राओं में बिजली का चमकना, बादल का गरजना इत्यादि लक्षित होते थे। उनके बहुत ऊंचाई तक कूद-कूद कर नाचने का अभिप्राय केवल मात्र इतना ही था कि वे जितना उछलेंगे, उनके पौधों के डण्ठल उतने ही लम्बे होंगे। इसके अलावा वे अपने मुंह से प्राय: वैसे ही शब्द करते थे, जिस तरह के जानवरों का वे शिकार किया करते थे।

नृत्य की उत्पत्ति पर तो आदिम मानव की श्रम साधना का स्पष्ट प्रभाव अब भी देखा जा सकता है। देहातों के धोबी, कहार और अहीर इत्यादि जातियों के नृत्य में श्रम साधन के लक्षण अब भी अवशेष मिलते हैं। उन पर उनके पेशों का भी स्पष्ट प्रभाव है। धोबी के नृत्यगीतों में कपड़े धोने की बात या घाट पर जाने इत्यादि की स्पष्ट छाप मिलती है। शिकार करने वाली जातियां उस प्रकार के विशेष नृत्य करती थीं, जिनमें शिकार के पकड़े जाने की नकल हो। खेतीहर समुदाय के नृत्यों में कटाई, बोआई, रोपाई आदि के चित्र मिलते हैं। कला का विकास मानव के विकास के साथ उत्तरोत्तर परिष्कृत होता गया, पर इसके साथ एक प्रश्न और सामने आता गया कि लोककला की उस परिभाषा को जिसके आधार पर इसका उदय आदिमकाल के मानव से माना जाता है, मान लिया जाय।

इस विवेचन के आधार पर आदिमानव की कला को ही यदि लोककला मानलें तो फिर उसके आगे की 'लोक' व्याख्या का कोई भी रूप स्पष्ट नहीं हो पाता। क्योंकि लोककला का वह व्यापक अर्थ जो हमें आदिम कला से मिलता है वह एकरूपीय और एकांगी है। वहां मानव का श्रम तो है, पर उद्बोधन की वह क्षमता नहीं है, जो जनता के जीवन को उत्प्राणित करती है; उसकी विविधता, उसका संघर्ष चित्रित करती है।

## डॉ. पांडेय एवं सुराणा को देवेन्द्र पुरस्कार

**उदयपुर (ह.सं.)।** गांधी सेवा सदन के स्थापना दिवस पर आयोजित समारोह में वर्ष 2020 का देवेन्द्र पुरस्कार स्वतंत्रता सेनानी डॉ. बी. एन. पांडेय एवं 2021 का विजयराज सुराणा को ताम्र प्रशस्तिपत्र तथा इक्कीस हजार रूपये की राशि के साथ प्रदान किया गया।

विजयराज सुराणा ने कहा कि देवेन्द्रभाई द्वारा संस्थापित गांधी सेवा सदन उनका जीवंत स्मारक है जहां मानवीय मूल्यों से युक्त बालपीढ़ी का निर्माण हो रहा है। उन्होंने समाज विकास की दिशा में जो कार्य किये हैं वे हमारी धरोहर हैं। अपने दुर्बल स्वास्थ्य के कारण डॉ. बी. एन. पांडेय उपस्थित नहीं हो सके। उन्होंने लिखा कि जिस व्यक्ति को आचार्य महाप्रज्ञ ने अणुव्रत महारथी का संबोधन दिया वह व्यक्ति देवेन्द्र देवतुल्य है। स्वाधीनता संग्राम के दौरान देवेन्द्रभाई का आवास स्थल गांधी विचार के सत्याग्रहियों का आश्रय तथा विचार स्थल था। डॉ. पांडेय का पुरस्कार संजय जैन ने ग्रहण किया।

इसी क्रम में देवेन्द्र बाल प्रतिभा पुरस्कार बाल निकेतन की छात्रा सैयद निदा अली तथा लताशा कुमावत एवं कृत्ति कर्णावट को प्रदान किया गया। उन्हें ताम्र प्रशस्तिपत्र एवं पांच हजार रूपये की राशि भेंट की।

मंत्री डॉ. महेन्द्र कर्णावट ने कहा कि देवेन्द्र काका एक धधकती चिनगारी थे जो सदैव ऊंची कल्पनाएं करते और उन्हें जमीन पर उतारने में सक्षम हो जाते। समारोह को मधुसूदन व्यास, कालू शाह, गुणसागर कर्णावट, ललित बड़ोला, डूंगरसिंह कर्णावट, पदमचंद पटावरी ने संबोधित किया।

## लेप्रोस्कोपिक ऑपरेशन से सफल इलाज

**उदयपुर (वि.)।** गीतांजली मेडिकल कॉलेज एवं हॉस्पिटल के जनरल सर्जरी विभाग के लेप्रोस्कोपिक सर्जन डॉ. पंकज सक्सेना, डॉ. मोहितकुमार बड़गुजर, एनेस्थेसिया विभाग की डॉ. सीमा परतानी, डॉ. अरुणा तथा स्टाफ हेमंत, प्रकाश ने अथक प्रयासों से 40 वर्षीय मीरा देवी (परिवर्तित नाम) का सफलतापूर्वक इलाज कर उसे नया जीवन प्रदान किया है।

डॉ. मोहित ने बताया कि रोगी को रेक्टल प्रोलेप्स की बीमारी थी। इसे मारवाड़ी में कांच बाहर आना और मेवाड़ी में आम बाहर आना कहा जाता है। इस बीमारी में मलद्वार ज़ोर लगने से बाहर आ जाता है। महिला को यह बीमारी पिछले आठ माह से थी। यहां लेप्रोस्कोपिक वेन्ट्रल मैश रैक्टोपैक्सी सर्जरी से मलद्वार का विच्छेदन कर उसे जाली से पक्का किया ताकि जोर देने पर बाहर नहीं निकले, रोगी अब स्वस्थ है।

## संवेदनशील जननेता थी किरण माहेश्वरी

**उदयपुर (ह.सं.)।** दीनदयाल उपाध्याय स्मृति मंच द्वारा आयोजित पूर्व शिक्षामंत्री किरण माहेश्वरी की प्रथम पुण्यतिथि पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के भारत भूषण ने उन्हें एक संवेदनशील जननेता बताते कहा कि वे कार्यकर्त्ताओं के मनोभाव को समझ त्वरित समाधान के लिए सदैव प्रयत्नशील रहती थीं।

संगोष्ठी में अनिल चतुर्वेदी तथा डॉ. सत्यनारायण माहेश्वरी ने किरणजी की प्रशासनिक दक्षता, पार्षदों के साथ आत्मीय संबंध एवं जन साधारण के साथ सहज व्यवहार के अनेक प्रसंग उद्घाटित किये। उनकी होनहार पुत्री दीप्ति किरण माहेश्वरी ने कहा कि वे न केवल एक आदर्श नेता थीं बल्कि एक कुशल गृहिणी, एक आदर्श मां तथा एक सुशील पुत्री भी थीं। उनका जीवन राजनीति के कार्यकत्ताओं के लिए एक पाठशाला के समान है।

**सहरियों में कुल्हाड़ी.....**

**(पृष्ठ तीन का शेष)**

भक्तिपरक गीतों में राम-कृष्ण-हनुमान गाये जाते हैं। इनमें सुदामा का कृष्ण ही राम के रूप में प्रकट हुआ मिलता है-

*मोराई राम मिले सुदेमा को मोराई....*
*जबरी सुदेमा की टूटी टपरिया*
*लेर भई परभु की कंचन मेल खड़े।*
*नाने सुदेमा पे पगड़ी*
*नाने तुंदल पगड़ी बधाई। सुदेमा को...*

शृंगार और खुली मजाकों के गीत भी इनमें प्रचलित हैं। शृंगारी गीतों को रसिया गीत कहा गया है। रसियों में राम-सीता, कृष्ण-राधा के बहाने अपनी बात बड़े चातुर्य रूप में प्रकट करते हैं। एक गीत में सीता पूर वजवान हो गई है मगर किसी से धनुष नहीं टूट रहा है-

*सीता होगई रे भर जवानी*
*धनस नहीं टूटे रसिया।*
*तेरी मेरी हो गई रे पहचान*
*निभानी पड़ेगी रे रसिया।*

इनके गीतों में ही समस्याओं के निदान हैं। सारे कष्ट अनुरंजनों के माध्यम से उठते हैं और उन्हीं के माध्यम से मिटते हैं। यहां आंसू भी है तो उन्मुक्त हंसी भी। देवी-दवताओं के कुछ गीत कन्हैया नाम से चलते हैं। कुछ हास्य गीत सामाजिक व्यंग्य-रंग लिए भी इनमें प्रचलित हैं जो चौपाई कहलाते हैं। लेगी चौपाई के साथ जो नृत्य किया जाता है वह लेगी नृत्य होता है। कई गीत भीली गीत से मेल खाते हैं।

होली, दीवाली, मकर संक्रांति के दिन बहिन-बेटियों को बुला लुगड़ी-कांचली देते हैं। जवांई को अंगोछा देने का रिवाज है। मेलोंठेलों में दैनिक उपयोग की चीजें खरीदते हैं वहीं युवक-युवती आपस में एक-दूसरे को पसंदकर भगा ले जाते हैं। युवती कोई चीज युवक के सामने फैंक कर उसे स्वीकार करने को कहती है। ऐसे मेलों में कार्तिक पूर्णिमा को लगने वाला कपिलधारा का मेला, वैशाखी अमावस को सीतावाड़ी का मेला बहुत प्रसिद्ध है।

सहरियों में वोराजी का बड़ा महत्त्व है। वही जन्म से लेकर मरण तक के संस्कारों को पूरा करने के लिए प्रत्येक प्रकार की आवश्यकता की पूर्ति करता है। कर्ज बढ़ने की स्थिति में वोराजी के वहां 'हाली' के रूप में रहने को बाध्य होना पड़ता है।

यही हाली प्रथा सागड़ी प्रथा है जहां एक बंधक के रूप में दास बनकर व्यक्ति को रहना होता है। ऐसे उदाहरण भी देखे गये हैं जहां छुटपन से लेकर मृत्यु की आखिरी घड़ी तक एक व्यक्ति हाली ही बना होता है।

सहरियों में मृतक को जलाने की प्रथा है। इनमें तीसरा और तेरहवां दिन विशेष संस्कार लिए होता है। तीसरे दिन खास समधी और तेरहवें दिन सभी सगे समधी तथा जाति भाई को भोज पर बुलाया जाता है। इस अवसर पर दाल-बाटी बनाई जाती है। लगभग बारह मन अनाज खर्च किया जाता है। इस मौके पर मृतक की गोत्र के सभी पुरुषों को अपना सिर मुंडवाना पड़ता है।

कपिलधारा या सीताबाड़ी जाकर मृतक के फूल-राख पानी में पधराये जाते हैं। यह संस्कार सारी या धारी कहलाता है। बाल-मृत्यु पर दस सेर आटे की रोटियां खिलाई जाती है। दूध पीते बच्चे की मृत्यु पर छोटे बच्चों को दूध पिलाया जाता है।

# राजस्थानी लोककलाओं का सर्वेक्षण ( 1 )

- डॉ. महेन्द्र भानावत -

उदयपुर में भारतीय लोककला मण्डल में कार्य करते अनेक बार अनेक स्थानों की यात्राएं कर विभिन्न जाति के लोगों से उनमें पीढ़ियों से संरक्षित श्रुत-स्मृति विषयक विपुल जानकारी से रू-ब-रू होने, देखने, सुनने, समझने और खोद-खोद कर उनका अतल-पतल पाने का सुयोग मिला। मेरे साथ हर समय कोई-न-कोई विभागीय सहयोगी रहा।

ऐसे अवसर भी मिले जब कलामण्डल के कलाकारों के साथ भी शोध यात्राएं की गईं। दिन को हम हमारा कार्य करते और रात्रि को प्रदर्शन कर ग्राम्यजनों का मन बहलाव करते। इस दौरान रेकार्डिंग यूनिट तथा फोटोग्राफर भी होते। ऐसे भी अवसर आये जब हमने चलती बस-ट्रेन में भी पूछताछ-परिचय बढ़ा जानकारियां लीं। मैंने चलते-चलते डायरियों में उनके नोट्स भी लिखे। यत्र-तत्र उनके प्रकाशन भी हुए। कलामण्डल में भी यदि कोई दर्शक या कलाकार मिल गया तो उससे भी जानकारी लेने में कोई कोताई नहीं की। कई बार कलामण्डल में आमंत्रित कर भी उनसे बड़ी मूल्यवान जानकारी हस्तगत की गई। प्रस्तुत धारावाहिक वर्णन में राजस्थान में व्याप्त विविध लोककलाओं सम्बन्धी जो सामग्री प्रकाशित की जा रही है वह निश्चय ही इस क्षेत्र में रूचि रखने वालों के लिए अत्यन्त मूल्यवान होगी।

**कुचामणी शैली के ख्याल :**

राजस्थान के कुचामणी शैली के ख्यालों का अध्ययन करने के लिए प्रसिद्ध ख्याल-कलाकार श्री लक्ष्मीनारायण राव को भारतीय लोककला मण्डल में आमंत्रित किया गया। वे यहां 06 से 15 जुलाई 1967 तक रहे। यहां उनसे उक्त ख्याल की प्रदर्शन-कला, कला-तन्त्र, शिल्प-विधान, गायकी, रंगसज्जा, रूपसज्जा तथा उनमें प्रयुक्त लोकछन्दों का विशेष अध्ययन किया गया। इसके अलावा श्री राव से कुछ भजन, नृत्यगीत तथा मासे भी लिखे गये।

श्री राव से प्राप्त सूचना के अनुसार-कुचामणी ख्यालों के प्रवर्तक लच्छीराम खोजी माने जाते हैं। वे बुडसू (मारवाड़) के रहने वाले थे। ऐसा प्रसिद्ध है कि बुडसू के ठाकुर से अनबन हो जाने के कारण वे कुचामण आकर रहने लगे। वहां उन्होंने लगभग 25 ख्यालों की रचना की। वे ही ख्याल कुचामणी शैली के ख्यालों के रूप में प्रचलित हुए। उनमें से भक्त प्रहलाद, गोग चुहाण, पारस पीताम्बरी, नौटंकी, विक्रम नागवन्ती, राजा चन्द्रसेन, बुलिया भटियारिन, श्रवणकुमार, निहालदे सुलतान, विजयसिंह, राव रिड़मल, जगदेव कंकाली, चन्द्रमलयागिरी, भरथरी पिंगला, भक्त पूरणमल, मीरा मंगल, सत्यवादी हरिश्चन्द्र नामक ख्यालों ने विशेष प्रसिद्धि पाई।

ये ख्याल जोधपुर के खत्री भीकमचन्द, कुचामण के नन्दलाल डालूका, लांबिया के गंगाविशन बुकसेलर, अजमेर के फूलचन्द बुकसेलर तथा मथुरा के आदर्श हिन्दू पुस्तकालय से प्रकाशित हुए हैं। इन किताबों का मूल्य एक आना से लेकर चार आना रहता। मेलोंठेलों में इनकी खूब बिक्री होती। इनमें से अधिकांश पुस्तकें कलामण्डल पुस्तकालय में तथा लेखक के निजी संग्रह में हैं।

संवत् 1994 के आसपास लगभग 70 वर्ष की आयु में लच्छीराम कालकवलित हुए। इन ख्यालों की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं-

(1) ये ख्याल दोहा, कवित्त, शेर, सोरठा तथा छप्पय में लिखे होते हैं।

(2) इनमें सोरठ, सारंग, विभास, मालकोस, कल्याण भोपाली, टीडी, ललित, कालिंगड़ा, परज, सोहनी, नागलहर, सोरठ गिरनारी, मांड, तरज, प्रभाती, खमावची, सोरठदेश रागों व भैरवी, खड़ी लावणी, भैरवी किलावणी, तिलाणी, हलकानी, चन्द्रमण, झेला तिलाणा, चलत चन्द्रायणी, दूबोला नाम लहरो, आरसी आदि रंगतों की बहुलता देखी जाती है।

(3) नगारे, ढोलक, मजीरे तथा हारमोनियम इन ख्यालों की संगत करते हैं।

(4) इनमें मजाकिया पात्रों की अधिकता रहती है।

(5) रचयिता की छाप इनमें जगह-जगह मिलती है।

(6) प्रत्येक मुख्य पात्र मंच पर आते ही सर्वप्रथम अपना परिचय देता है।

(7) संदेशा लाने ले जाने के लिए हलकारा होता है।

(8) खेल की संगति बिठाने के लिए पादपूर्ति के रूप में बजैये-गवैये भी अपना महत्त्वपूर्ण भाग अदा करते हैं।

(9) इन ख्यालों का त्रिदिशीय मंच साधारण सज्जा लिये होता है।

(10) लच्छीराम के अलावा पूनमचन्द सिखवाल, उस्ताद मोतीलाल, बंशीधर शर्मा, वजीरा तेली, मोहनलाल, धन्नालाल, भैरू बगस, रामरतन, नन्दराम, छाजूलाल, अम्बालाल, जीणजी तथा नाथूलाल ने कुचामणी ख्यालों की रचना में उल्लेखनीय योग दिया है।

**बहुरूपिया :**

08 अगस्त 1967 को संग्रहालय देखने आया एक व्यक्ति नाना भावाभिव्यक्तियों के साथ ग्रामीण महिलाओं की वेशभूषाओं को बड़ी बारीकी से देख रहा था। तब ऐसा लगा कि यह भी कोई अच्छा कलाकार होना चाहिये। यह सोच उससे विभिन्न प्रकार के प्रश्न पूछे गये। संग्रहालय की गेलेरी में उसने जो बातें बताईं वे इस प्रकार थीं-

'मूं बेरूपियो हूं। मने उदेराम केवे। धोइन्दा रो रेवावालो हूं सा। पेली पेल मादेव शंकर री टेमूं माणी पैदाइश व्ही। शंकर रे व्याव में गालाईकर जणी पेल परुष मजो कीदो वने शंकर आपणे हातूं नेगचार दीदो। जदीऊं तरै-तरै रा रूप बणाय भांडाई करवा लागग्या। अणीऊं मां लोग भांड भी वाजां हां। चित्तौड़ माणो खास जनम रो थान है। वठारा बेरूप्या दरबारी भांड वाजे। दरबार में वार तेवार वी जाता ने अनाम पाता। दूजा भांड कंवरपदा रा वाजै। मां भी कंवरपदा रा भांड बाजा हां।

माणे कोई यजमान नी वे। ढोली, नगारची, मादल्या भाट, भुवाई, भंगी, वागरी, मेवाड़ा गारी, सुतार, ओसवालां रा सेवग ने बड़वा भाट, अणां ने छोड़ीने सब जात्यां पाऊं मां नेगचार ले सका हां। पण खेल तो कोई भी देखी सके है। वणी में माने कोई एतराज नी। मारे बाप रो नाम मोती हो। मोतीजी रा दला, दलाजी रा शंभु, शंभुजी रा हेतराम, हेतरामजी रा पेमा, पेमाजी रा गरदारी। आगे पतो नी। मां रो छोरो देवीलाल भी आछो कला रो जाणकार है। मां कईतरै री ढांडाढोरां री बोल्यां भी बोलां हां। आप भांपी नी सको के जनावर बोले के आदमी। मूं पचा रे पा हूं।

मां पेला तासोल रा रेवावाला हा। वठे माणा पांच सात घर हा। माणे काका रो बेटो भाई परसराम रा बाप तो केलवे जाईर्‌या ने मां धोइन्दे। परसराम अणी वगत माणी कला रो आछो जाणकार है। ब्याव-शादी में माणी जात रो यो नेग है के मां जाइने वटे भांडाई करां ने नेगचार रे रूप में एक रीपो पावां। कींरा ब्याव में नी जाई पूगां तोई भांडाई री रीपो खरो है।'

अर्थात् मैं बहरूपिया हूँ। मुझे उदयराम कहते हैं। धोइन्दा का रहने वाला हूँ । महादेव शंकर के समय से हमारा उद्‌भव हुआ। शंकर के विवाह में गाल बजाकर जिस प्रथम पुरुष ने मनोविनोद किया उसे शंकर ने अपने हाथ से पुरस्कार दिया। तभी से नाना प्रकार के स्वांग धारण कर भांडाई करने लग गये। इसलिए हम लोग भांड भी कहलाते हैं। चित्तौड़ हमारा उद्‌भव स्थल है। वहाँ के बेरूपिये दरबारी भांड कहलाते हैं। वार-त्यौहार पर राजदरबार में जाकर ये इनाम पाते थे। दूसरे भांड कंवरपदे के भांड कहलाते हैं। हम भी कंवरपदे के भांड कहलाते हैं।

हमारे कोई यजमान नहीं होते। ढोली, नगारची, मादल्या भाट, भवाई, हरिजन, बागरी, मेवाड़ के गाडरी, सुथार, ओसवालों के सेवग तथा बड़वा भाट इनको छोड़ बाकी सभी से नेगचार प्राप्त करते हैं। खेल तो कोई भी देख सकता है। उसमें हमें किसी प्रकार की कोई आपत्ति नहीं। मेरे पिता का नाम मोती था। मोती के दलाजी, दलाजी के शंभुजी, शंभुजी के हेतरामजी, हेतरामजी के पेमाजी, पेमाजी के गिरधारी हुए। आगे मुझे ज्ञात नहीं। मेरा पुत्र देवीलाल भी इस कला का अच्छा जानकार है। हम कई प्रकार की पशु-पक्षियों की बोलियां भी बोलते हैं। आप इस बात का पता नहीं लगा सकते कि जानवर बोल रहा है या कोई पुरुष। मेरी उम्र पचास वर्ष के करीब है।

पहले हम तासोल के रहने वाले थे। वहाँ हमारे पांच-सात घर थे। हमारे चचेरे भाई परसराम के पिता तो केलवे जाकर बस गये और हम धोइन्दा। इस समय परसराम हमारी कला का बहुत अच्छा जानकार है। ब्याह-शादी में हमारी जात का यह नेगचार है कि हम वहाँ जाकर भांडाई का एक रुपया प्राप्त करते हैं। यदि हम किसी कारणवश न भी जा पाते हैं तो भी हमारा एक रुपया तो हमें मिल ही जाता है।

राजसमंद जिले के केलवा का परसराम बड़ा होनहार था। पहलीबार मेरी उससे 1958 के जुलाई-अगस्त में आयोजित लोककलाकार प्रशिक्षण शिविर में भेंट हुई जो अन्य सभी कलाकारों में सर्वाधिक चर्चित, हंसमुख, अपने फन का उस्ताद तथा सर्वाधिक लोकप्रिय बहुरूपिया था जो अपने नित नये स्वांगों से रात्रिकालीन प्रदर्शनों में छाया रहा।

समापन समारोह में परसराम को सर्वश्रेष्ठ कलाकार घोषित कर सम्मानित किया गया। बाद में कलामण्डल के लोकानुंरजन समारोहों में भी परसराम शोभा बढ़ाते रहे। प्रशिक्षण शिविर राजस्थान विकास विभाग के सहयोग से बेदला राव के महलों में कलामण्डल द्वारा आयोजित किया गया जिसका संयोजन मेरे जिम्मे था।

**- क्रमशः**

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक डॉ. तुक्तक भानावत द्वारा 352, कृष्णपुरा, सेंटपॉल स्कूल के पास, उदयपुर - 313001 (राज.) से प्रकाशित एवं मुद्रक लोकेश कुमार आचार्य द्वारा मैसर्स पुकार प्रिंटिंग प्रेस 311-ए, चित्रकूट नगर, भुवाणा, उदयपुर (राज.) से मुद्रित। सम्पादक : रंजना भानावत। फोन : 0294-2429291, मोबाइल - 9414165391, Email : shabdranjanudr@gmail.com, drtuktakbhanawat@gmail.com, सर्व विवादों का न्याय क्षेत्र उदयपुर होगा।